खण्ड: 3, अंक: 11 नवम्बर 2020

संश्लेषण

डी सी आर सी मासिक पत्रिका

चुनावी बाजारतंत्र
मतदान, अनुमान एवं परिणाम

डी.सी.आर.सी.
विकासशील राज्य शोध केन्द्र
दिल्ली विश्वविद्यालय

मुख्य संपादक
प्रो. सुनील के चौधरी

संपादक
डा. रमेश भारद्वाज
नागेन्द्र कुमार
शरद कुमार यादव

संपादकीय मंडल
डा. अभिषेक नाथ
कुँवर प्रांजल सिंह
आशीष कुमार शुक्ल

© डीसीआरसी 2018

रूपाकंनः आर किशोर

संश्लेषण

चुनावी बाजारतंत्रः मतदान, अनुमान एवं परिणाम

अनुक्रमिका

संपादकीय i-ii

1. चुनावी बाजरतन्त्र एवं लोकतंत्र का अस्तित्वः एक अवलोकन 1–4
   – डा० कु० आरती
   – प्रो० डा० ए०के० पाण्डेय

2. भारतीय राजनीति में चुनावी विज्ञानः अनुमान से प्रक्षेपण तक 5–8
   – राखी

3. चुनाव–विज्ञान पद्वति (सेफोलॉजी) का बाजारीकरण – जया ओझा 9–12

4. चुनावी बाजारतंत्रः श्रेय लेने की होड़ या केवल व्यवसायिक लाभ? 13–15
   – प्रियंका बारगल
   – हितेन्द्र बारगल

5. बिहार विधान सभा चुनाव 2020ः जनादेश के निहितार्थ – सृष्टि 16–18

6. चुनावी बाजारतंत्र मे मीडिया की भूमिकाः मतदान, अनुमान एंव परिणाम 19–21
   – अजय कुमार शाह

7. चुनावी बाजारतंत्रः पद्वत्ति एवं प्रकार – आकांक्षा परिहार 22–26

8. चुनाव प्रणालीः लोकतान्त्रिक वैधता का प्रश्न – चित्रा राजौरा 27–32

9. चुनाव में मत और मतदानोत्तर सर्वेक्षणों के परिणामों का बाजारीकरण 33–37
   – डॉ. अमित अग्रवाल

10. पूर्वांचल के गांव एवं चुनावी बाजार तंत्र – चंद्रमणि राय 38–41

सम्पादकीय

विकासशील राज्य शोध केंद्र की हिन्दी मासिक पत्रिका, संश्लेषण के वर्ष 2020 के ग्यारहवें अंक को पाठकों के समक्ष प्रेषित करते हुए हमें प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। गत 28 माह से यह केंद्र भिन्न–भिन्न रुपों में समस्त शोधार्थियों, शिक्षार्थियों एवं विद्यार्थियों के साथ एक अटूट संबंध बनाए रखने में सफल रहा है। निरंतरता की इस कडी में संश्लेषण का यह अंश एक बार पुनः शोधार्थियों के प्रति हमारी निष्ठा तथा शोध गुणवता में हमारी प्रतिष्ठा का परिचायक है।

संसदीय राजनीति में चुनाव की अहम भूमिका रहती है। 21वीं शताब्दी से चुनाव एवं चुनावी प्रक्रिया एक प्रतिस्पर्धात्मक बाजार व्यवस्था में परिवर्तित होती जा रही है। इस बाजार व्यवस्था में राजनीतिक दल एवं राजनीतिज्ञ विभिन्न कर्ताओं के रुप में प्रतिस्पर्धी हैं जो मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए प्रयासरत रहते हैं। बाजार व्यवस्था स्वंय में स्वायत्त है जो किसी भी एकल कर्ता द्वारा नियंत्रित नहीं हो सकती है। ऐसी प्रतिस्पर्धात्मक चुनावी बाजार व्यवस्था में 'सर्वश्रेष्ठ सामार्थ्यवान' नहीं अपितु 'सर्वश्रेष्ठ प्रतिभावान' ही विजयी माना जाता है। यही कारण है कि ऐसी व्यवस्थाओं में चुनाव में मतदान, अनुमान एवं परिणाम का मूल्यांकन कर पाना अत्यंत कठिन कार्य भी हो जाता है।

1960 के दशक में चुनाव विश्लेषण विज्ञान मतदाताओं के राजनीति व्यवहार एवं रुझान पर आधारित होता था। ऐसी प्रक्रिया में राजनीतिक दलों के लिए जनादेश से शासकीय शुद्धि, शोधन एवं संशोधन करना सरल हो जाता था। प्रारंभिक वर्षो में चुनाव विश्लेषण विज्ञान *मतदाता–केंद्रित* ही होता था। 1990 की बाजार व्यवस्था के पश्चात यह विज्ञान *मतदाता से मतदान* की ओर अग्रसर होने लगा। चुनाव मे किस राजनीतिक दल को कितनी सीटें प्राप्त होंगी, यह मुख्य धारा बनने लगा तथा मतदाता का व्यवहार एवं रुझान गौण होने लगा। 21वीं शताब्दी में चुनाव विश्लेषण विज्ञान बाजार तंत्र के रुप में रुपांतरित होने लगा। विभिन्न चुनावी संस्थाएँ/एजेंसियाँ तथा चुनाव विश्लेषज्ञ अपने–अपने अनुमानों से मतदान के परिणामों का ऑकलन करने लगे।

2014 एवं 2019 के लोकसभा चुनाव हों या फिर राज्य विधान सभाओं एवं नगरपालिकाओं के चुनाव, चुनावी एजेंसियों ने मतगणना एवं निर्गम मतानुमान (ओपिनियन/एग्ज़िट पोल) द्वारा

मतदान पर अपने अनुमान प्रदर्शित करने आरंभ कर दिये। मतदान पर अपने अनुमान प्रदर्शन की इस होड़ में ये एजेंसियाँ राजनीतिक एवं व्यवसायिक लाभांश के लिए सक्रिय होती चली गई। परिणामस्वरुप इनके मतदान अनुमानों एवं चुनाव आयोग द्वारा घोषित वास्तिविक परिणामों में विशाल अंतर देखने को मिलता रहा। यही कारण है कि व्यवसायिकता की इस़ दौड़ में चुनाव विश्लेषण विज्ञान अपने मूल उद्देश्य से विचलित होने लगा।

नवम्बर माह में बिहार चुनाव तथा मध्यप्रदेश उप–चुनाव में चुनावी एजेंसियों की इस विफलता ने एक बार पुनः बाजारतंत्र के इस भाव को प्रबल कर दिया। विषय की समसामयिकता को ध्यान में रखते हुए केंद्र ने 'चुनावी बाजारतंत्रः मतदान, अनुमान एवं परिणाम' विषय पर लेख आमंत्रित किये। दस उत्कृष्ट लेखों को सम्पादकीय मंडल ने चयनित किया जो आप सभी के समक्ष एक प्रकाशित पत्रिका के रूप में उल्लेखित हो रहे हैं। ये समस्त लेख मौलिक होने के साथ–साथ समकालीन भारतीय लोकतांत्रिक राजनीति में चुनावी बाजारतंत्र के परिवर्तनीय आयामों को भी संबोधित करने का प्रयास कर रहे हैं। स्वतंत्र चिंतन पर आधारित लेखकों के विचार उनकी रचनात्मकता, सृजनात्मकता एवं मौलिकता को भी इंगित करते हैं।

वर्ष 2020 के संश्लेषण के इस नवम्बर माह के ग्यारहवें अंक में प्रकाशित लेखों पर पाठकों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर ही हम नवम्बर माह के अपने बारहवें समसामयिक तथा महत्वपूर्ण अंक में और अधिक गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करेंगे।

संपादक मंडल

शुक्रवार, 25 दिसम्बर 2020

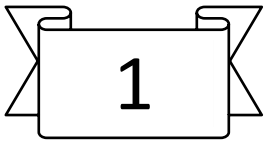

चुनावी बाजरतन्त्र एवं लोकतंत्र का अस्तित्वः एक अवलोकन

डा0 कु0 आरती

विधि संकाय, एच.एन.बी. गढ़वाल केन्द्रिय विश्वविद्यालय, उत्तराखण्ड

प्रो0 डा0 ए0के0 पाण्डेय

डीन एवं प्रधान, विधि संकाय, एच.एन.बी. गढ़वाल केन्द्रिय विश्वविद्यालय, उत्तराखण्ड

संविधान का पालन, समस्त व्यक्ति को न्याय, विधि का शासन की सफलता, समानता एवं स्वतन्त्रता आदि का सफल संचालन एवं स्थापना सुयोग्य एवं दृढ़ निश्चय व्यक्तित्व द्वारा बनाये गये नीति व नियम पर निर्भर करता है। जिसे सरकार एवं प्रतिनिधि का नाम दिया गया है इनका चयन जनता के माध्यम से होता है। स्वच्छ चुनाव पर समृद्ध संवैधानिक तंत्र आधारित होता है, सही चुनाव अपने आप में स्वतन्त्रता एवं विकास का प्रतीक माना जाता है। निश्पक्ष चुनाव किसी भी सफल एवं सभ्य राजव्यवस्था का लक्ष्य होता है। क्योंकि पारदर्शिता एवं स्वतन्त्र मतदान शासनतंत्र को समृद्ध बनाने में श्रेश्ठ भूमिका निभाता है। चुनाव के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति शासन तंत्र में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करता है। यही कारण है कि संविधान निर्माताओं ने निष्पक्ष चुनाव को लोकतंत्र प्रणाली के लिए महत्वपूर्ण माना एवं इसको संविधान के अन्तर्गत अपनाया भी है जो समस्त नागरिकों को अपने अनुकूल प्रतिनिधि चुनने का अधिकार प्रदान करता है। चुनाव का तात्पर्य स्थायी सबल सरकार का चयन है, न कि चुनावी बाजार तंत्र को प्रोत्साहित करना, जो विधिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था को विच्छेद करने को तत्पर है। वर्तमान में चुनावी बाजारतंत्र ने लोकतंत्र की आत्मा को झकझोर कर रख दिया है। जो कहीं न कहीं संविधान की गरिमा एवं आस्था के विरूद्ध है, विधि के शासन की नींव मजबूत हो इसके लिए निष्पक्ष चुनावी रणनीति अपरिहार्य है। समस्त राजनीतिक समूह लोकहित में कार्य करे यह महत्वपूर्ण एवं चिन्तन का विषय है। चुनावी बाजारतंत्र देश को अन्तरिक रूप से खोखला कर रहा है। अतः आज सबल चुनावी सिद्धान्त की आवश्यकता है। जो भारतीय समाज को नयी दिशा, नयी ऊर्जा, नया मार्गदर्शन दे सके। स्वतन्त्रता स्थिर एवं निष्पक्ष चुनाव ही देश को एक नयी मजबूती दे सकता है, नये चुनौतियों का शानदार तरीके से सामना किया जा सकता है, गरीब, मध्यमवर्ग, किसानवर्ग आदि की भावनाओं से खेलना बन्द किया जा सकता है।

चुनाव के माध्यम से चयनित सरकार कोई नयी कहानी या विचारधारा नहीं है यह जर्मी बेन्थम एवं जे0 एस0 मिल के विचारों में भी देखने को मिलता है। जिन्होंने ने सफल लोकतंत्र के लिए प्रतिनिधित्वकारी एवं भागीदारी सरकार की वकालत की है। जे0 एस0 मिल ने एक कदम आगे बढ़ कर 19वीं सदी में महिलाओं के मतदान एवं सहभागिता के अधिकार का भी समर्थन किया है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना के अन्तर्गत राजनीतिक न्याय का सिद्धान्त इसका ज्वलंत उदाहरण है, जिससे महिलाओं को भी शासन तंत्र में प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित की जा सके। अतः सक्षम सरकार के लिए स्वच्छ एवं स्वस्थ चुनाव अत्यन्त उपयोगी है, तभी न्याय, स्वतंत्रता एवं समानता की प्रतिस्थापना करने की बात करना उचित है, अन्यथा सब कोरी कल्पना मात्र है। चुनावी बाजारतंत्र केवल जीत एवं हार का मैदान तैयार करता है, लोक हित को तिलांजलि देकर व्यक्तिगत हित के पोषण का चकव्यूह रचा जाता है। यह स्वभाविक भी है क्योकि जीत एवं हार अलगाव की भावना को पोषित करता है, समाजहित के नाम पर समूह हित प्रखर होने लगता है। जाति एवं धर्म को उच्चता एवं निम्नता की कसौटी पर अपने जीत एवं हार के अनुसार मापा जाता है। ये सभी किसी भी समाज में कुन्ठा एवं कुप्रतिष्ठित बड़ी सरलता से फैलाने में प्रबल होते है। अतः चुनावी बाजारतंत्र के स्थान पर चुनावी विकासतंत्र का बिगुल बजाया जाना चाहिए, जो जनता को एकजुट कर सके। तभी चुनाव का यर्थाथ रूप एव आत्मीयता को पहचाना जा सकता है।

भारतीय संविधान में लोकतंत्र एवं गणराज्य शब्द अपने आप स्थिर एवं निष्पक्ष की कहानी कह रहे है न कि चुनावी बाजार तंत्र की, यही कारण है कि भारतीय संविधान में प्रभावी एवं निष्पक्ष चुनाव के लिए स्पष्ट प्रावधान किये गये है। जो श्रेष्ठ लोकतंत्र को नया आयाम एवं गति प्रदान करते है। अनुच्छेद 324 से लेकर 329 तक संसदीय चुनाव एवं मतदान के अधिकार के सम्बन्ध में स्पष्ट उल्लेखनीय किया गया है। यह सर्वविदित है कि लोकतंत्र जनता का शासन है और यह राज्य संचालन की सबसे उत्तम शासन प्रणाली मानी जाती है। क्योंकि स्वच्छ एवं मर्यादित चुनाव इसकी आधारशिला है। यदि पारदर्शिता, चुनाव व्यवस्था से परे हो एवं व्यक्तिगत हित इसका लक्ष्य हो, तथापि मान लेना चाहिए कि लोकतंत्र का अस्तित्व खतरे में है। प्रारम्भिक तौर पर, भारतीय संविधान की प्रस्तावना यह उद्घोषणा करती है कि लोकतंत्र भारतीय संविधान की आत्मा, आदर्श एवं आधारभूत ढ़ाचा है केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य ए0आइ0आर01973 सु0को01461 इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण है। इस वाद में उच्चत्तम न्यायलय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि लोकतंत्र जो प्रस्तावना में समाहित किया गया है वह संविधान का आधारभूत ढ़ाचा

है जिसे संसद विधि बनाकर नष्ट नहीं कर सकती है। यह वाद चुनावी बाजार तंत्र को प्रतिबधिंत करता है।

चुनावी व्यवस्था के प्रभावी निर्धारण के लिए लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जिसके अन्तर्गत चुनाव में अव्यवस्था उत्पन्न करने वालों के लिए दण्ड का प्रावधान किया गया है। चुनाव के नैतिक पहलू पर भी यह कानून प्रकाश डालता है। राजनीति के अपराधीकरण को रोकने के लिए भी यह अधिनियम सही सिद्ध हुआ है। इस अधिनियम के अन्तर्गत किसी धर्म एवं जाति का गलत प्रयोग वर्जित किया गया है। आचार संहिता भी गलत चुनावी कियाकलाप को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इन्दरागांधी बनाम राजनरायण (1975) के वाद में उच्चतम न्यायलय ने चुनाव के विवाद के सम्बन्ध में यह अभिनिर्धारित किया है कि स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष चुनाव विधि के शासन का आधार है और विधि का शासन भारतीय संविधान का आधारभूत ढ़ाचा है। विधि आयोग द्धारा समय–समय पर चुनाव सुधार पर अनुग्रह की जाती रही है। दल–बदल कानून भी चुनाव बाजारतंत्र को रोकने की दृष्टि से लाया गया है। ताकि राजनीतिक समूह अपने व्यक्तिगत हित की चाह में एक राजनीतिक समूह से दूसरे राजनीतिक समूह का भाग बनते रहे। यह कियाकलाप लोकतंत्र की विश्वसनियता पर आघात करता है, यही कारण था कि संसद द्वारा 1985 में दल–बदल कानून बनाकर चुनावी व्यवस्था को नया रंग दिया।

आधुनिक सभ्य समाज चुनावी बाजारतंत्र के समापन की मांग करता है क्योंकि चुनावी बाजारतंत्र आर्थिक दोहन को बढ़वा देता है, यह सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने में रूकावट पैदा करता है। राज्य एवं राजनीतिक समूह के अपने आपसी झगड़े में निर्धन एवं गरीब व्यक्ति को न तो न्याय मिलता है साथ ही उनका विकास रूकता है। अनेक राजनीतिक समूहो का जन्म होता है, पूर्ण बहुमत से कोइ भी राजनीतिक समूह अपनी सरकार बनाने में असमर्थ होता है यही कारण है कि गठबन्धन की सरकार अस्तित्व में आती है जो संघर्ष एवं विवादो के अनुसार कार्य करती है जिससे मजबूत विधिक व्यवस्था एवं लोक व्यवस्था की परिकल्पना पूर्ण नही हो पा रही है। देश के लिए देश भक्ति जैसे मरती जा रही है राष्ट्रीयता के लिए देश या राज्य का मुखिया एवं चुनावी व्यवस्था निष्पक्ष होना अत्यन्त आवश्यक है।

वर्तमान युग इस सत्य को आमंत्रणा कर रहा है कि भावी चुनावी व्यवस्था उत्तरदायी बने, चुनावी बाजार तंत्र का अन्त हो, समस्त व्यक्ति समरसता एवं विधि की पाथमिकता है, निम्न तथ्यों पर चिन्तन की आवश्यकता है, कि क्या चुनावी व्यवस्था का लक्ष्य स्वस्थ आर्थिक एवं सामाजिक

व्यवस्था कायम करना नहीं है? क्यों आज चुनावी व्यवस्था बाजारतंत्र में परिवर्तित हो रही है? क्या निष्पक्ष एवं स्थायी चुनाव का स्वपन वर्तमान राजनीतिक समूह द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता है? क्या जाति एवं धर्म को चुनाव से विरक्त नहीं किया जा सकता है? उपरोक्त प्रश्न चुनावी बाजारतंत्र को जड़ से मिटा सकते है केवल आवश्यकता संकल्प लेने की है, परिणाम अपने आप भविष्य में मुखर होगा।

♦♦♦♦♦

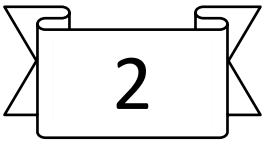

भारतीय राजनीति में चुनावी विज्ञानः अनुमान से प्रक्षेपण तक

राखी

राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय राजनीति में मतदाता की प्राथमिकता तथा पसंद का अनुमान एवं चुनाव परिणाम से इनके सम्बंध का अध्ययन एक ऐसा मार्ग है जिसने विभिन्न चुनाव विज्ञान आधारित संस्थाओं कि गतिविधियों को वैधता प्रदान करते हुए इनकी अध्ययन शैली में प्रमाणिकता के प्रश्न को महत्व प्रदान किया है। चुनाव विज्ञान के तहत भारतीय राजनीति में वर्तमान समय में चुनाव से पूर्व तथा इसके पश्चात किए गए परिणाम सम्बंधित अनुमान मतदाता के विचारों को प्रभावित करने के साथ ही साथ चुनावी बाजार में इन संस्थाओं कि वैधता सुनिश्चित करने हेतु महत्वपूर्ण कदम बन गया है किंतु यह चुनाव परिणाम कितने सफल है तथा किस स्तर तक इस लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक हैं यह इनकी प्रासंगिकता हेतु महत्वपूर्ण परिप्रेक्ष्य है।

अनेक चुनाव विज्ञान अध्ययनरत संस्थाएं इस विषय में कार्यरत है जिनके द्वारा भारतीय लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं के चुनाव में अनुमान संबंधी परीक्षण किए जाते रहे हैं इस संदर्भ में वर्तमान समय में अनेक समाचार चैनल भी स्वायत्त रूप से इस प्रकार के अध्ययन में भागीदारी करते हैं। हालांकि अनेक निजी तथा सार्वजनिक संस्थाएं इस क्षेत्र में प्रतिस्पर्धी वातावरण के साथ ही इनकी अधिकारिक व्यस्तता के दौर को बनाए हुए हैं किंतु यह अध्ययन चुनावी परिणामों के कितने समीप हैं यह विषय इनकी प्रासंगिकता को सुनिश्चित करने हेतु अवश्यक है। इस कारण यह संस्थाएं चुनावी परिणामों को किस स्तर तक सही अनुमानित करने में सफल हुई है यह एक चिंतनीय विषय है जिसे निरंतर अनदेखा किया जा रहा है।

इस विषय में इनके अध्ययन के परिणाम तथा इनकी औचित्यता किस स्तर तक उचित है जिसके आधार पर इनका उद्देश्य पूर्ण होता है यह महत्वपूर्ण विषय है। इन संस्थाओं के अनुमानों की असल परिणामो से निकटता ऐसा प्रश्न है जो इस विषय तथा इससे सम्बंधित संस्थाओं की कार्यविधि की औचित्यता पर विचार करने को कारण देती है। इन संस्थाओं के वर्तमान समय में प्रासंगिकता पर इस प्रकार निम्न आधार प्रश्न उठाये जाते हैः

सर्वप्रथम समस्या इनके अनुमानों में दर्शाया गया दलों तथा प्रत्याशियों के मध्य जीत का दायरा है जो यह लगभग 10 से 20 सीटों के अधिक तथा कम होने का एक साधारण दायरा प्रस्तुत करते है। परिणामो के अनुमानों में इस अंतर से इनके इस अध्ययन कि वैधता सफल नहीं हो सकती है जिसके आधार पर यह सभी संस्थाएं अपने चुनावी अनुमान दर्शाती है। इस प्रकार इनकी यथार्थता की अल्पता के आधार पर इनके अनुमानों पर प्रश्न चिन्ह लगाया जाता है। जिसका कारण है आज के समय में चुनाव विज्ञान केवल एक बाजार की तरह बन गया है। जिसके कारण यहां अधिकतर संस्थाएं बिना किसी प्रभावी विरोध के इस क्षेत्र में अपना स्थान बनाए हुए हैं।

दूसरी समस्या इस प्रकार के परीक्षण मे लिए गए नमूनों की मात्रा है जिसके अंतर्गत अधिकतर संस्थाएं अल्प समय में कम नमूनों के साथ परिणाम घोषित करती हैं। इनकी मात्रा का अल्प होना नमूनों में जनता के उचित प्रतिनिधित्व पर प्रश्न चिन्ह अंकित करता है जिसके समाधान हेतु अधिक मात्रा में इनके एकत्रीकरण से अधिक बहुलता का समायोजन इनके उचित प्रतिनिधित्व के मार्ग को सरल बनाएगा क्योंकि नमूनों का कुछ ही क्षेत्रो तथा वर्गो से एकत्रित किये जाने तथा अन्य वर्गो का प्रतिनिधित्व न होने से कुछ क्षेत्रों तथा वर्गों का समाहिकरण न होना न्यायोचित समायोजन न होने की समस्या को उजागर करता है।

तीसरी समस्या इन सर्वेक्षणों में संलग्न विभिन्न संस्थाओं के मध्य प्रतिस्पर्धा है। इन संस्थाओं के प्रभावी आधार कि कमी तथा निरतंर प्रसिद्धि के कारण गुणवत्ता में निम्नता एक गहन समस्या है। पूर्व के समय में हालांकि चुनाव अनुमान अधिकतर मुद्रित पत्रिकाओं जैसे इंडिया टुडे आउटलुक तथा फ्रंटलाइन में ही प्रकाशित किए जाते थे किंतु धीरे धीरे कुछ समाचार पत्रों ने भी इन चुनावी अनुमानों को मुद्रित करना आरंभ कर दिया। जिसे कुछ टेलीविजन चैनलों ने भी अपनाया तथा इस प्रतिस्पर्धा में अधिकतर समाचार चैनलों के भाग लेने से इस विषय को अधिक प्रतिस्पर्धी बना दिया है जिसके कारण यह प्रतिस्पर्धा अल्प समय में अधिक शीघ्र परिणाम प्राप्त करने पर बल देने लगा है।

चौथा अधिकतर व्यवसायिक संस्थान जो इस प्रकार के अध्ययन में शामिल होते है उनका क्षेत्र–कार्य पर अधिक समय न देना तथा वित्तीय निवेश में कमी तथा सर्वेक्षणकर्ताओं कि अल्प संख्या महत्वपूर्ण परिप्रेक्ष्य के रूप में इस अल्पता का कारण माना जा सकता है। जिसमें सर्वेक्षणकर्ताओं को अपनी सुविधाओं के अनुसार सर्वेक्षण करते हुए भेदभावपूर्ण नमूनों के प्रस्तुतिकरण की समस्या को उजागर करता है जिससे इन अनुमानों की प्रासंगिकता को प्रश्न

चिन्हित करती है। इसके सरलतापूर्ण अध्ययन करने हेतु अधिकतर सुविधाओं के अनुसार सर्वेक्षण इन संस्थाओं के अनुमानों की प्रासंगिकता के समक्ष गहन समस्या है जिसमे अधिकतर शहरी क्षेत्रो को ही शामिल किया जाता है। जिससे ग्रामीण क्षेत्रो में इनकी पहुंच एक गंभीर समस्या के रूप में इनकी वैधता को अस्वीकार करती है जिससे कि वर्गो कि बहुजातीयता को अनदेखा किया जाना इस संदर्भ में इसकी सफलता के मार्ग में बाधा बनता है। इस प्रकार ग्रामीण परिवेश कि विविधता तथा इस प्रकार की परिस्थितियों में मतदाताओं के विचारो के निर्माण को अनदेखा किया जाना वर्तमान समय में उभरकर आया है।

पाँचवा इन अध्ययन केन्द्रों द्वारा पुराने परंपरागत प्रचलनों को बिना किसी बदलाव के अपना लेना भी इस विषय में एक अहम बाधा है जिसके समाधान हेतु निरंतर तत्पर होना आज के समय की आवश्यकता है। उदाहरणतया किसी एक वर्ग, धर्म तथा जाति का एक ही तरफ मतदान झुकाव को सार्वभौमिक मानना तथा इन प्रवृतियों में वर्तमान समय में हो रहे बदलाव को नजरंदाज कर देना इसके महत्व को अनदेखा कर देता है।

यद्यपि इस प्रकार का अध्ययन चुनाव के समय प्रत्याशियों द्वारा मतदाता कि मनोंस्थिति को समझने हेतु किया गया अहम प्रयास है जिसमें इनके व्यवहारात्मक परिवर्तनों को आंकड़ो द्वारा प्रदर्शित करते हुए दलीय जीत प्रतिशतता का पैमाना निश्चित किया जाता है। इस प्रकार चुनाव के अनुमान मतदाता के प्रति होने वाले जनसांख्यिकी आधार पर इनके व्यवहार को सुनिश्चित करन का महत्वपूर्ण भाग बन सकते है। इसके आलावा यह किसी भी दल के चुनाव प्रचार की सफलता तथा असफलता को भी जांचने का एक प्रयास है जिसे प्रभावित कर यह दल भविष्य में अपने तथा अन्य दलों के प्रदर्शन को आंकते है तथा इसके द्वारा विभिन्न संस्थाएं यह सुनिश्चित करती है कि इनका अनुमान दलों की गतिविधियों के आधार पर किस स्तर तक खरा उतरा है।

चुनाव विज्ञानः समस्या से समाधान तक

इस दौरान अन्य समस्या उन मतदाताओं के विचार तथा मत को समझने की है जो समय– समय पर एक से दूसरे दल तथा प्रत्याशियों की तरफ उन्मुख होते रहते है। इन मतदाताओं के मतों को अधिकतर संस्थाओं द्वारा अनदेखा करने के कारण भी इनके अनुमानों का प्रक्षेपण नहीं हो पाता है जिससे चुनाव परिणामों से इनकी निकटता अधिक नहीं हो पाती है। यह वर्तमान समय में उभरती ऐसी विशेषता है जिसे चुनाव विज्ञान अध्ययनरत संस्थाओं को न केवल समझना होगा बल्कि अपनी रणनीतियों में शामिल भी करना होगा ताकि वे इस प्रकार के मतदाताओं के बदलते विचारो को अपने अनुमानों में समुचित रूप से शामिल करने हेतु उचित कदम उठा सके।

इन सभी समस्याओं ने मुख्यतया चुनाव परिणामो से सम्बंधित अनुमानों की वधता से बाजारिक प्रतिस्पर्धा के आधार स्वरूप में जिन नई प्रवृत्तियों को उभारा है उसने हालाँकि इस क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं के न केवल कार्य करने के तरीके को प्रश्न चिन्हित किया है बल्कि चुनाव विज्ञान के क्षेत्र में अकादमिक संस्थाओं को भी शामिल किया है जिसके आधार पर यह चुनाव विज्ञान के विषय क्षेत्र के रूप में प्रासंगिक बनती जा रही है तथा इनका विस्तृत क्षेत्र इन व्यवसायिक संस्थाओं से बढ़कर अकादमिक क्षेत्र में भी विकसित होने लगा है। इस प्रकार यह विषय जो वर्तमान समय में केवल एक बाजारिक प्रतिस्पर्धा के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर रहा है असल सफलता केवल इनमे आवश्यक सुधारों के आधार पर ही किया जा सकता है। जिससे विस्तृत तथा समाहित होकर इस विषय को अध्ययन किया जाने पर यह संस्थाएं अपने उद्देश्य को समुचित रूप से प्राप्त कर सकेगी।

♦♦♦♦♦

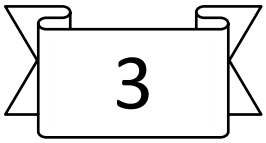

3

चुनाव–विज्ञान पद्वति (सेफोलॉजी) का बाजारीकरण

जया ओझा

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

सेफोलॉजी सामाजिक एवं राजनीतिक विज्ञान का एक प्रतिभाग है, जो निर्वाचनों का परीक्षण तथा सांख्यिकीय विश्लेषण करता है। प्रमुखतः इसका कार्य न केवल निर्वाचनीय रुझानों का अध्ययन करना है, अपितु यह भी समझना है कि किस प्रकार निर्वाचन, लोकतन्त्र को सशक्त करता है एवं किस प्रकार की गतिविधियां लोकतन्त्र के लिए अनिष्टकर सिद्ध हो सकती हैं। अतएव, सेफोलॉजी द्वारा निर्वाचनीय रुझानों के अध्ययन से यह ज्ञात किया जा सकता है कि समाज में लोकतन्त्र को कैसे समाहित किया जा रहा है, एवं किसी भी निर्वाचन में मतदान–व्यवहार को प्रभावित करने वाले कौन से कारक महत्वपूर्ण है। 1969 से पूर्व निर्वाचन परिणाम का पूर्वानुमान बहुत कम लोगों द्वारा लगाया जाता था, परंतु 1969 के पश्चात भारत में कुछ संस्थाओं द्वारा सेफोलॉजो अध्ययन का आरंभ किया गया। जिसके द्वारा कई निर्वाचनों का अध्ययन किया गया। इस प्रकार, एक वस्तुपरक एवं वैज्ञानिक शोध का आरंभ हुआ। परंतु विगत कुछ वर्षों में सेफोलॉजी शोध का ध्यान मतदान–व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों से हट कर चुनाव के परिणामों को लेकर भविष्यवाणी करने पर जाने लगा है, जिसके कारण सेफोलॉजी शोध बाजारीकरण उन्मुख होता प्रतीत हो रहा है। प्रस्तुत लेख में सेफोलॉजी शोध के बाजारीकरण जैसी समस्या ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास किया जाएगा।

सेफोलॉजी शब्द की निर्मिति

सेफोलॉजी द्वारा निर्वाचन, मतदान–व्यवहार एवं निर्वाचन–परिणामों के पूर्वानुमानों का अध्ययन किया जाता है। मतदान व्यवहार पर सुव्यवस्थित जनमत–सर्वेक्षण, निर्वाचन–पश्चात सर्वेक्षण एवं परिष्कृत आकड़ों का विश्लेषण के साथ वर्तमान समय में सेफोलॉजी राजनीतिक व समाजविज्ञान का विशिष्ट क्षेत्र बन गया है। सेफालॉजी शब्द की निर्मिति ब्रिटिश के डब्ल्यू. एफ. आर. हार्डी ने किया, परंतु आर. बी. मेक्केलम ने 1952 में निर्वाचनों के अध्ययन का वर्णन करने के लिए इस शब्द का लिखित में प्रयोग किया। तत्पश्चात इसे निर्वाचनों के वैज्ञानिक–विश्लेषण के रूप में

जाना जाने लगा। प्रो. योगेश अटल इसकी परिभाषा बताते हुए कहते हैं कि "सेफोज" एक यूनानी शब्द है, जिसका अर्थ कंकड़ है। यूनान में निर्वाचन के लिए मतपत्र के स्थान पर कंकड़ से कार्य किए जाते थे, इसलिए कंकड़ गणना–शास्त्र अथवा सेफोलॉजी का आविर्भाव हुआ। राजनीतिक निर्वाचनों का यह वैज्ञानिक–विश्लेषण सांख्यिकीय आँकड़ों पर आधारित होता है, इसके लिए एक निर्वाचन–विश्लेषककर्ता की अनिवार्यता होती है जो जनसांख्यिकीय प्रतिमानों, जाति की गतिशीलताओं, कार्य–समूहों एवं पूर्ववर्ती निर्वाचनों में मुख्य विषयों की भलीभाँति राजनीतिक समझ रखता हो। निर्वाचन–विश्लेषककर्ता ना केवल मतदानों में रुझानों व मत–व्यवहारों का विश्लेषण करते हैं अपितु, मतदान के मतों की संख्या अथवा कुल मतों के प्रतिशत के रूप में सरकार के सीटों की संख्या का भी विश्लेषण प्रदान करते हैं। अतएव, भारत जैसे जीवंत जनतांत्रिक देश के लिए चुनाव–विश्लषककर्ता की भूमिका रचनात्मक एवं महत्वपूर्ण होती है।

भारत में सेफोलॉजी अध्ययन

विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र में निर्वाचनों का अध्ययन करना किसी चुनौती से कम नहीं है। भारत बड़ी जनसंख्या के साथ देश के भौगोलिक आकार में भी वृहत है, इसके अतिरिक्त भारतीय समाज की सांस्कृतिक, धार्मिक, जातीय एवं भाषाई विविधता इस परिघटना को विशिष्ट रूप से जटिल बनती है। निर्वाचन स्वयं में एक जटिल एवं बहुआयामी सामाजिक व राजनीतिक परिघटना है, जिसका विभिन्न पद्धतियों द्वारा अध्ययन कीय जा सकता है। सेफोलॉजी एक ऐसी पद्धति है जिसके माध्यम स निर्वाचन में मत–व्यवहार को समझा जा सकता है। यद्यपि भारत में शोध अध्ययन का प्रारम्भ स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात हुआ, परंतु संस्थात्मक स्तर पर भारतीय मतदाताओं के मतों एवं रुझानों को समझने के लिए 1950 में पहला जनमत सर्वेक्षण कीय गया। एरिक डिकोस्टा द्वारा 1950 में इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक ओपिनियन (आई० आई० पी० ओ०) की स्थापना की गई तथा इस संस्था द्वारा दिल्ली, केरल व पश्चिम बंगाल में कुछ राजनीतिक अध्ययन भी किए गए। इस संस्था के अतिरिक्त व्यक्तिगत स्तर पर भी 1967 में चुनाव का अध्ययन करने का प्रयास किया गया। भारत में मतदान–व्यवहार को मापने की परंपरा को बाशरूद्दीन अहमद एवं इल्डसवेल्ड द्वारा आगे बढ़ाया गया। राजनीतिक समाजशास्त्र में क्षेत्रीय शोध के कर्णधार मानवशास्त्री श्यामचरण दुबे एवं राजनीतिशास्त्री रजनी कोठारी को माना जाता है। दोनों ने मिलकर राजनीतिक समाजशास्त्र में शोध की नींव डाली। रजनी कोठारी द्वारा विकासशील समाजों के अध्ययन का केंद्र की स्थापना की गई, जिसके माध्यम से उन्होने राजनीतिशास्त्र में

लौकिक एवं वास्तविक शोध को बढ़ावा दिया। 1967 में पहला राष्ट्रीय निर्वाचन का वैज्ञानिक अध्ययन किया गया। यह अध्ययन न केवल राजनीतिशास्त्रियों द्वारा किया गया अपितु, समाजशास्त्रीयों एवं मनोवैज्ञानिकों द्वारा भी बढ़–चढ़ कर भाग लिया गया। उत्तर प्रदेश के एटा जिले के लिए समाजशास्त्री योगेश अटल द्वारा भाग लिया गया। इनके अध्ययन की न केवल सराहना की गई अपितु इसको लोकल कम्युनिटीज एंड नेशनल पॉलिटिक्स के रूप में प्रकाशित भी किया गया। इसके पश्चात भारत में शोध को बढ़ावा मिला। अस्सी के दशक में जनमत सर्वेक्षण एवं सेफोलॉजी शोध को लोकप्रियता मिलने लगी। इस समय डॉ प्रणय रॉय द्वारा भारतीय मत–व्यवहारों को जानने के लिए निर्वाचन के समय जनमत–सर्वेक्षण किया जाने लगा रॉय ने यह प्रयास किया कि जनमत–सर्वेक्षण को एक वैज्ञानिक प्रविधि बनाया जाए, जिससे चुनाव का अध्ययन एवं सीटों की भविष्यवाणी की जा सके। अतएव, रॉय द्वारा 1984 में मार्केटिंग ऐंड रिसर्च ग्रुप के सहयोग से एग्जिट पोल को संचालित किया गया। परिणामस्वरूप टेलीविजन के दर्शकों के बीच प्रणय रॉय प्रसिद्ध हो गए। वर्तमान में सेफोलॉजी अध्ययन का विकास तीव्र गति से हो रहा है, जिसके माध्यम से निरंतर चुनावों का वैज्ञानिक विश्लेषण होता रहता है।

बाजारोन्मुख सेफोलॉजी शोध

भारतीय निर्वाचनीय राजनीति में सेफोलॉजी अध्ययन का विकास एक नई विधा एवं एक नई शाखा के रूप में हुआ, जिसके अंतर्गत मतदान–व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन किया जाने लगा। इसका मुख्य उद्देश्य ही यही है की निर्वाचन को प्रभावित करने वाले मतदाताओं के व्यवहार का सटीक अध्ययन किया जाए। परंतु विगत कुछ वर्षों में यह देखा जाने लगा है कि सेफोलॉजी शोध में चुनाव परिणामों की भविष्यवाणियाँ करने की पद्धति का विकास होने लगा है जिसके कारण समाज–वैज्ञानिकों द्वारा ज्योतिषियों की भूमिका का निर्वहन किया जाने लगा है। भविष्यवाणी द्वारा प्रत्येक समाज–वैज्ञानिक अपनी ख्याति प्राप्ति की ओर अग्रसर हो रहा ह। इसके लिए वह हर संभव प्रयास करता है की उसकी भविष्यवाणी निर्वाचन को लेकर सत्य प्रकट हो, परंतु इस भविष्य वक्ता की भूमिका में रहकर वह यह भूल जाता है की सेफोलॉजी अध्ययन मात्र भविष्यवाणी तक ही सीमित नहीं है अपितु, उसका मुख्य कार्य निर्वाचन को प्रभावित करने वाले मुख्य कारकों का विश्लेषण करना होता है।

शोध को बाजारू बनाने में राजनीतिक दलों की विशेष भूमिका रहती है। निर्वाचन में भाग लेने वाले दल इन भविष्यवाणियों में रुचि दिखते हैं, इसीलिए उनके द्वारा ऐसे कई बाजारू शोध

संस्थाओं का निर्माण किया गया है जो मुखतः उन्हीं दल के लिए कार्य करते हैं जो उन्हें वित्त पोषित करता है। यही कारण है की ओपिनियन पोल एवं सर्वेक्षण पर प्रश्न उठाए जाने लगे हैं।

वर्तमान में निर्वाचन एक बाजार शोध का विषय बन कर रह गया है। इसके लिए यह आवश्यक है कि चुनाव आयोग द्वारा कुछ ऐसे कदम उठाए जाए जो इन बढ़ती हुई भ्रामक निर्वाचनीय भविष्यवाणियों की विशेष जांच कर सके एवं वास्तविक सेफोलॉजी शोध को बढ़ावा दे सके। सेफोलॉजी शोध एवं एग्जिट पोल जैसी अध्ययन की पद्धतियों की कुछ सीमाएं निर्धारित की जाए, जिससे एक व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक शोध को निर्वाचन के क्षेत्र में बढ़ावा दिया जा सके।

♦♦♦♦♦

4

चुनावी बाजारतंत्रः श्रेय लेने की होड़ या केवल व्यवसायिक लाभ?

प्रियंका बारगल

शोधार्थी, अथर्शास्त्र अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर, (म.प्र.)

हितेन्द्र बारगल

सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, गुनौर, जिला पन्ना, (म.प्र.)

हमारे भारत देश में जनता का शासन है, अर्थात हमारे देश की जनता द्वारा अपने बहुमूल्य मत का प्रयोग करते हुए, अपने प्रतिनिधित्व का चुनाव किया जाता है। ये प्रतिनिधित्व या राजनेता सामान्यतः 5 वर्षों के लिए चुने जाते हैं, किंतु कई बार परिस्थिति वश किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिल पाता, जिसकी परिणति आगे चलकर गठबंधन को सरकार के रूप में सामने आती है, पर इसमें भी राजनेताओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो जाने पर सरकार गिर जाती है तथा दूसरे पक्ष के मजबूत ना होने पर तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए राष्टपति शासन लागू कर दिया जाता है, किंतु राष्ट्रपति शासन 6 माह से अधिक एवं 1 वर्ष की अवधि तक ही लागू हो सकता है। अतः इस स्थिति से निपटने के लिए मध्यावधि चुनाव करवाना अपरिहार्य हो जाता है।

स्वतंत्र भारत के प्रथम चुनाव आयुक्त होने का श्रेय श्री सुकुमार सेन को हासिल हुआ तत्कालीन परिस्थिति को देखते हुए सेन द्वारा जो भी निर्णय लिए गए थे ,वह उनके तथा उनकी टीम की योग्यता को सिद्ध कर चुके है। चुनावी बाजारतंत्र को कुशलता पूर्वक एवं पारदर्शिता के साथ संचालित करने हेतु चुनाव आयोग के अलावा मीडिया की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। स्वतंत्रता के पश्चात् जिस प्रकार से बड़े–बड़े राजनेताओं की राजनीतिक पद को लेकर महत्वकांशा उत्पन्न हुई है, वह कुछ सीमा तक लोकतंत्र की जडो को हिलाने के लिए काफी थी। उस समय की बात की जाय तो नेहरू, पटेल, मुखर्जी, अंबेडकर आदि नेताओ के बीच वैचारिक मतभेद उत्पन्न होना शुरू हो गए थे तथा सभी नेता अपना–अपना पक्ष मजबूत करते हुए, श्रेय लेने की होड़ में सम्मिलित थे, जिसका प्रचार–प्रसार तत्कालीन मीडिया द्वारा भी किया गया था।

भारत में 1952 में पहला आम चुनाव 489 सोटों पर 22,400 पोलिंग बूथों की सहायता से लड़ा गया, जिस पर अनुमानित 10.52 करोड रुपए व्यय हुए थे और इसके पश्चात यह चुनावी व्यय बढ़ता ही जा रहा है, जो कि 2014 के लोकसभा चुनाव में ₹ 3500 करोड़ की सीमा को पार कर चुका है। मीडिया द्वारा अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन करते हुए इस तथ्य से आम जनता को अवगत कराया गया है। चूँकि चुनाव का खर्चा केंद्र सरकार द्वारा ही वहन किया जाता है, तथा विधानसभा के चुनावों को करवाने का कर्त्तव्य राज्य सरकारों का होती है, किन्तु अगर यर्थाथ में देखा जाये, तो यह व्यय आम नागरिक से ही कर के रूप में अंततः वहन किया जाता है। चुनावी बाजारतंत्र के महासग्राम के बीच मीडिया के कर्त्तव्य बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखते है। प्रत्येक मतदाता चाहे वह गरीब हो या अमीर, मीडिया के महत्वपूर्ण साधनो का प्रयोग करता ही है, जैसे अखबार, रेडियो, टेलीविजन इत्यादि। राजनीति दलों द्वारा भी अपने–अपने दल के प्रचार–प्रसार करने तथा मतदाता का रुझान अपनी और करने तथा अपनी नीतियों और योजनाओं व वादों को आम जनता तक पहुँचाने के लिए मीडिया का निरंतर प्रयोग किया जाता है। यहाँ यह बात भी उल्लेखनीय है, कि मीडिया एक द्विधारी तलवार की तरह कार्य करती है, जहाँ उसका कर्त्तव्य समाज की बुराइयों को प्रकाश में लाने के साथ–साथ उन्हें निष्किय करने की भी है, वही मीडिया द्वारा किसी भी बात को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत करना भी किसी खतरे से कम नहीं होता। चुनावी वातावरण के अंतराल में तो मीडिया की भूमिका और महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि इस समय प्रत्येक मतदाता का दृष्टिकोण बस अपने भविष्य के होने वाले प्रतिनिधित्व एवं नेताओं के बारे में जानने के लिए ही मीडिया पर स्थिर होती है। इस समय मीडिया की एक गलती देश के भविष्य के साथ–साथ मतदाताओं के भविष्य के साथ समझौता कर सकती है, अतः चुनावी महासंग्राम के दौर में मीडिया को ना केवल अपने व्यवसाय को बढ़ाने हेतु अपनी टीआरपी को अधिक करने के लिए येन–केन प्रकरेण अनुचित साधनों का प्रयोग करना चाहिए और न ही ऐसे साधनों को बढ़ावा देना चाहिए।

चुनावी बाजारतंत्र मं चुनाव की दिनाँक तय होने से लेकर चुनावी परिणाम घोषित होने के तक तथा उसके उपरांत शांति व्यवस्था कायम रखने हेतु, मीडिया को और अधिक कर्त्तव्य ों से अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए।

चुनावी वातावरण में मीडिया को अपनी सीमाओं का उल्लंघन नही करना चाहिए, उसे किसी भी गलत या भ्रामक सूचना को बढ़ावा नहीं देना चाहिए। मीडिया को निष्पक्ष होकर लोकतंत्र की

भावनाओं का सम्मान करते हुए, प्रत्येक राजनीतिक दल के बारे में सही, संपूर्ण, सत्य व स्पष्ट सूचना ही देना चाहिए।

मीडिया द्वारा किसी भी पक्ष के बारे में सूचना देने से पूर्व अपने स्तर पर ही, पूर्व मे उस सूचना की गहराई से खोज कर लेनी चाहिए तथा सूचना सत्य होने पर ही उसको पुष्टि करनी चाहिए एवं ऐसी सूचना को प्रकाशित करना चाहिए, तथा आम जनता के लिए सुलभ बनाना चाहिए।

चुनावी वातावरण में किसी पक्ष का पलड़ा थोड़ा सा भारी दिखाई देने पर मीडिया को उसी पक्ष का गुणगान कर श्रेय लेने की होड़ नहीं करना चाहिए, बल्कि निष्पक्ष होकर सभी राजनीतिक दलों की योजनाओं व घोषणाओं का परीक्षण कर जनता को भी सकिय बनाने में अपना कर्त्तव्य निभाना चाहिए। मीडिया के माध्यम से जहां बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा अपनी राय को व्यक्त किया जाता है, वही मीडिया आम जन समूह की अभिव्यक्ति का साधन भी बनता है और उन्हें मंच भी प्रदान करता है। चुनावी बाजारतंत्र में मतदाता के रुझान जानने के लिए सर्वेक्षण की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण है। सर्वेक्षण के अंतर्गत मतदाताआं से प्रश्न पूछ कर, उनके उत्तर का आकलन करते हुए चुनाव परिणाम की संभावना व्यक्त की जाती है। इस सर्वेक्षण को लोकप्रिय बनाने का श्रेय मीडिया को ही दिया जा सकता ह। मीडिया द्वारा अपनी भूमिका व कर्त्तव्य ों का निर्वहन करते हुए मतदाता को सही सूचना प्रदान करते हुए अधिक से अधिक वोट डालने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

इस प्रकार हम कह सकते हैं, कि चुनावी परिणाम को मीडिया द्वारा पूरी तरह से तो नहीं , परन्तु बहुत हद तक प्रभावित किया जा सकता है। आज का युवा भी अपने देश के विकास के बारे में विचार करता है एवं निडरता के साथ रखता है। यही वह पीढ़ी है, जो सोशल मीडिया का प्रयोग सर्वाधिक करती है। आज आम जनता का विचार मीडिया के साधनों जैसे– फेसबुक, व्हाट्सएप, टेलीग्राम, ट्विटर आदि द्वारा तय होती है तथा बहुत सीमा तक परिवर्तित भी जा सकती है। मीडिया द्वारा ऐसे क्षेत्रों में जहां विजयी का अंतर बहुत ही कम है, मीडिया की भूमिका बहुत ही प्रभावशाली होती है। अतः मीडिया को भी अपना कर्त्तव्य पूर्ण निष्पक्ष होकर निभानी चाहिए, तभी लोकतंत्र की महिमा बनी रह सकेगी, तथा देश को एक जिम्मेदार एवं महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व मिल सकेगा एवं नेतृत्व में देश का चहुमुखी विकास संभव हो सकेगा।

♦♦♦♦♦

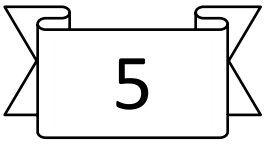

बिहार विधान सभा चुनाव 2020: जनादेश के निहितार्थ

सृष्टि

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविधयालय

बिहार विधान सभा चुनाव में मिले अद्भुत जनादेश को देश के विभिन्न भागों में हुए उपचुनावों में भाजपा की जीत से देशव्यापी समर्थन प्राप्त हुआ है। बिहार में मिले स्पष्ट व सुदृढ़ जनादेश का स्वर देश के प्रत्येक भाग में मिली अद्भुत व अद्वितीय जीत में सुनाई पड़ रही है। देश की जनता एक दूसरे के स्वर से स्वर मिलाकर भाजपा व राजग के समर्थन में एकजुट है तथा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में अपनी अटूट आस्था व्यक्त कर रही है। नकारात्मक राजनीति, मिथ्य दुष्प्रचार एवं दुर्भावनापूर्ण व विद्वेषपूर्ण राजनीति को एक बार पुनः पराजित होना पड़ा। वास्तव में देखा जाए तो एक उभरते भारत की आहट है, जो कि कोविड–19 महामारी के सामने भी रुकता नहीं, अपितु नए संकल्प लेकर नए गाथाएँ रचता है। आज जब विश्व के विकसित देश भी कोविड–19 महामारी के सामने त्राहिमाम कर रहे है, भारतीय लोकतंत्र की सफलता सम्पूर्ण विश्व को चमत्कृत कर रही है।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने विजय के अवसर पर अपने संबोधन में उचित कहा कि अपने जनादेश से लोकतांत्रिक शक्तियों को सुदृढ़ कर बिहार ने यह प्रमाणित कर दिया है कि वह लोकतंत्र की भूमि है। एक ओर राजग "आत्मनिर्भर बिहार" की भविष्योन्मुखी कार्यक्रम के माध्यम से प्रदेश को आगे ले जाने के लिए कृत–संकल्पित है, वहीं दूसरी ओर राजद, कॉंग्रेस व कम्युनिस्टों का गठगोड़ जातिवाद, वंशवाद एवं पाखंड पर आधारित विभाजनकरी व प्रतिगामी शक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। बिहार की जनता लालू कुशासन के 15 वर्ष कभी भी भूल नहीं पाएगी, जब प्रदेश न केवल अवनति के दलदल में फंस गया था, अपितु अपराधियों एवं माफियाओं के राज में आए दिन हिंसा, अपहरण व कुशासन को सहने पर मजबूर था। प्रत्येक स्तर पर व्यापक भ्रष्टाचार, सरकारी खजाने की भारी लूट व आपराधिक तंत्र को संरक्षण के कारण समाज में प्रत्येक वर्ग का जीवन–निर्वाहन कठिन हो गया था। राजग सरकार ने न केवल बिहार को हिंसा, भ्रष्टाचार व कुशासन के दमन चक्र से बाहर निकाला, अपितु प्रदेश में विकास

व सुशासन के मार्ग को भी प्रशस्त किया। अतः बिहार ने कुशासन के स्थान पर सुशासन को चुनकर सम्पूर्ण विश्व को एक संदेश दिया है। भाजपा राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री जगत प्रकाश नड्डा ने उचित कहा है कि बिहार की जनता ने "लालटेन राज" के स्थान पर "एलईडी राज" चुनकर प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में अपने दृढ़ विश्वास को एक बार पुनः प्रदर्शित किया है।

बिहार के साथ–साथ मध्य प्रदेश उपचुनावों में भारी विजय, गुजरात में सभी सीटों पर विजय, उत्तर प्रदेश, मणिपुर, तेलंगाना एवं कर्नाटक में अद्भुत विजय, लद्दाख हिल काउंसिल व दादर एवं नागर हवेली स्थानीय निकायों में प्राप्त विजयश्री से सम्पूर्ण देश में भाजपा के प्रति बढ़ते जन–समर्थन का पता चलता है। भाजपा पूर्व से पश्चिम एवं उत्तर से दक्षिण तक व्यापक जन–समर्थन प्राप्त कर यह प्रमाणित करने में सफल रही है कि सकारात्मक राजनीति को देश की जनता का पूर्ण आशीर्वाद व समर्थन मिलता है। कोविड–19 की महामारी में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी न जिस प्रकार से देश का नेतृत्व किया व निर्धन से निर्धन व्यक्ति, वरिष्ठ नागरिक, कृषक, प्रवासी मजदूर, महिला, दिव्यांग और समाज के अन्य वर्गों को अत्यधिक राहत प्रदान की। प्रत्येक क्षेत्र में अत्यधिक सुधार किए, देश का मनोबल स्तर ऊँचा बनाए रखा व भाजपा के लाखों कार्य–कर्ताओं ने "सेवा ही संगठन" कार्यक्रम के माध्यम से करोड़ों लोगों की जिस प्रकार सेवा की, उसे सम्पूर्ण देश ने भारी समर्थन दिया है, आत्मनिर्भर भारत अभियान कार्यक्रम के अंतर्गत देश के बढ़ते हुए कदमों को जन–जन का समर्थन प्राप्त हो रहा है, जिससे देश प्रत्येक चुनौती को अवसर में परिणित करते हुए एक नए भारत का पथ प्रशस्त कर रहा है।

इस चुनाव में महिलाओं की सहभागिता भी अत्यधिक निपुण रही। इस अर्ध–जनसंख्या, जिसने मौन–मतदाता (**Silent Voter**) के रूप में भाजपा के पक्ष में अधिक मात्र में मतदान किया। मात्र एक को छोड़कर सभी निर्गम मतानुमान गलत सिद्ध हुए, इसका अर्थ स्पष्ट है जो सत्य था, वही सही सिद्ध हुआ। बिहार विधान सभा चुनाव के निर्गम मतानुमान को लेकर जब देश के सभी सर्वेक्षण संस्थाओं ने बिहार में महागठबंधन की सरकार बनाने का अनुमान लगाया था, वहीं दिल्ली विश्वविद्यालय के विकासशील राज्य शोध केंद्र (डी सी आर सी) ने राजग को 129 सीट मिलने का अनुमान लगाकर पूर्ण बहुमत दे दिया था। विकासशील राज्य शोध केंद्र ने महागठबंधन को 106 सीटें मिलने का अनुमान लगाया था। मात्र यही सर्वेक्षण विधान सभा चुनाव को लेकर हुए विभिन्न सर्वेक्षणों में से सबसे सटीक व उत्कृष्ट रहा। राजग ने जहां 125 सीटों पर विजय पाई है, वहीं महागठबंधन ने 110 सीटें प्राप्त की। यह सर्वेक्षण दिल्ली विश्वविद्यालय

के विकासशील राज्य शोध केंद्र व राजनीति विज्ञान विभाग के संयुक्त तत्वाधान में किया गया था।

बिहार चुनाव में महिलाओं का मत अधिक मात्रा में मिलने के बहुत से कारण है, जिसमें मुख्य रूप से मुस्लिम महिलाओं को तीन–तलाक से छुटकारा, घर–घर तक गैस पहुँचाना, सुकन्या समृद्धि योजना, बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ योजना तथा प्रधानमंत्री जन–धन योजना सहित सभी योजनाओं ने महिलाओं को लाभ पहुंचाया है।

अतः कहा जा सकता है कि "आत्मनिर्भर भारत" के आह्वान से प्रेरणा लेते हुए बिहार भाजपा ने "आत्मनिर्भर बिहार" हेतु स्वयं को प्रतिबद्ध किया है। बिहार के इस आह्वान को जन–जन का समर्थन प्राप्त हो रहा है।

♦♦♦♦♦

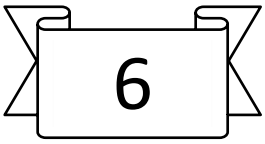

चुनावी बाजारतंत्र मे मीडिया की भूमिकाः मतदान, अनुमान एंव परिणाम

अजय कुमार शाह

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय.

भारत की राजनीतिक व्यवस्था उदरवादी लोकतान्त्रिक प्रतिमान (मॉडल) के बहुत समीप है। संविधान के माध्यम से कार्यपालिका, विधानपालिका व न्यायपालिका की शक्तियों की व्यवस्था अपनी सीमा के अन्तर्गत निर्धारित की गई है। इन स्थापित व्यवस्था को संचालित करने के लिए प्रतिस्पर्धात्मक स्वरूप मे दलीय व्यवस्था का निर्धारण किया गया हैं, साथ में स्वतंत्र मीडिया की व्यवस्था का प्रावधान है। भारतीय लोकतन्त्र ने विभिन्न देशो व विद्वानों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है, क्योंकि भारत मे सामाजिक एकरूपता नहीं बल्कि समाज का स्वरूप विविधता भरा है जिस कारण भारत के लोकतान्त्रिक प्रक्रिया के प्रारंभ से ही पश्चिम देशो के कई विद्वानों ने यहां तक कहा था की भारत मे लोकतंत्र सफल नहीं हो पाएगा क्योकि यहाँ विविधता है।

भारत के लोगो ने समय के साथ विश्व को यह बता दिया कि विविधता मे एकता (एकता मे विविधताः दीनदयाल उपाध्याया) जो भारत की संस्कृति है वह लोकतन्त्र को और अधिक सुदृढ़ कर रही है। भारत में भले ही सामाजिक स्तर पर चुनौती व समस्या अधिक है फिर भी भारत के लोगों ने लोकतन्त्र को केवल जीवित ही नहीं रखा अपितु दशक दर दशक और मजबूत बनाते जा रहे हैं। इस विश्व के सबसे बड़े लोकतान्त्रिक व्यवस्था मे लोकतन्त्र को सशक्त करने मे चुनाव और उस चुनाव मे मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका, सकारात्मक व नकारात्मक दोनों स्तर पर रही हैं। आगे चर्चा करेंगे की कैसे भारत के चुनावी बाजारतंत्र में मीडिया कि सकारात्मक व नकारात्मक आयाम है और इसके माध्यम ने मतदाता के अनुमान और परिणाम को किस प्रकार प्रभावित किया हैं।

मीडिया क्या है?

मनुष्य अपनी भाषा तथा कलात्मक अभिव्यक्ति से किसी घटना को एक से अधिक स्थान व व्यक्ति तक पहुँचा सकता है उसे मीडिया का नाम दिया जाता हैं। जन–साधारण भाषा में कहे मीडिया सूचना, मनोरंजन व मनोरजन पहुँचने का एक सरल साधन हैं। टेलीविजन ,रेडियो, अखबार आदि

मीडिया के कई रूप हैं। भारत मे मीडिया वर्ष दर वर्ष लगभग 10 फीसदी के अधिक गति से बढ़ रहा है। 1990 से 2010 के मध्य अंतराल मे मीडिया का अभूतपूर्व विस्तार हुआ। देश मे 84 हजार से अधिक दैनिक समाचार–पत्र (रजिस्ट्रार ऑफ न्यूजपपेर्स फॉर इंडिया) और 600 से अधिक चैनल है। इस प्रकार इतनी बड़ी मात्रा मे मीडिया की उपस्थिति से लोगो के पास विभिन्न स्रोत से सूचना पहुंच ही जाती है। मीडिया मे जो स्थान शेष था वह भी मास मीडिया (फेसबुक, ट्विट्र, यूट्यूब, व्हटसएप, गूगलग्रुप व अन्य)।

17वें आमसभा चुनाव में 543 सीटों के लिए हुए 67.11 फीसदी मतदाता ने मतदान किया। जो अब तक हुए आम चुनावों में सर्वाधिक है। साथ ही यह चुनाव अन्य आम चुनावों से भिन्न था क्योंकि यह आम चुनाव में परंपरागत रुप से चुनाव लड़ने की परंपरा भिन्न थे। एक नए प्रकार के चुनावी कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें प्रमुख रैलियां, पोस्टर लगाए गए, घर–घर जाकर मतदाताओं के दिल जीतने का प्रयास किया गया। साथ ही राजनेताओं ने मास मीडिया का पूर्ण उपयोग किया। विशेषकर बीजेपी ने मास मीडिया का प्रयोग अधिक व्यवस्थित रूप से किया। जिसे अन्य दल ने प्रयोग किया परंतु अन्य दल पीछे रहे मीडिया व मास मीडिया के प्रयोग पर हम आंकड़ों के आधार पर भी देखे तो पाएगे की यह एकतरफा ही था।

टविट्र के अनुसार चुनाव के दौरान पांच करोड़ सात लाख से अधिक संबंधित ट्वीट भेजे गए। इनमे एक करोड़ 11 लाख या यूं कहे कि कुछ ट्वीट में मोदी का जिक्र था। इसके बाद अरविंद केजरीवाल थे जिसके पचास लाख (नौ प्रतिशत) ट्वीट थे और राहुल गांधी तो बहुत ही पीछे थे और उनके सिर्फ 12 लाख ही ट्वीट थे। यहां यह स्पष्ट था कि बीजेपी एक व्यक्ति को विशेष मानकर चुनाव में उतरी थी। परंतु बीजेपी ने कहा कि मास मीडिया में चल रहे चुनावी संघर्ष हैं वह किसी व्यक्ति विशेष का नहीं अपितु 'टीम मोदी' के विचारों की विजयी है। लेकिन हमने यह साफ देखा है की मीडिया व मास मीडिया अभियान मोदी पर ही केंद्रित था।

एक उदाहरण के रूप में देखें तो सोशल मीडिया ने मतदाता और नेता के मध्य की दूरी समाप्त कर दी थी 'उदाहरणस्वरूप हैदराबाद में एक जनसभा से ठीक पूर्व मोदी के एक समर्थक ने ट्वीट किया कि कैसे उसकी वृद्ध माँ भाजपा की प्रशंसक है और वह उनसे मिलना चाहती है बीजेपी की स्थानीय इकाई से कहा गया कि इस महिला से संपर्क स्थापित करो उसे मंच पर लाया गया और मोदी ने उनसे आशीर्वाद लिया। इस उदाहरण से प्रतीत होता है कि जनता और नेता के मध्य में दूरी समाप्त हो गई है। परंतु यह केवल चुनावी बरिश ही प्रतीत होता है।

चुनाव का बजारीकरण

क्या हम मास मीडिया को लोकतंत्र हितैषी मान सकते हैं? कई रूपों में मान तो सकते है पर निष्पक्ष रूप से नहीं, क्योकि मीडिया के साथ–साथ मास मीडिया का राजनीतिकरण हो गया हैं। उदाहरण के रूप मे भाजपा ने इस आम चुनाव के 9 सप्ताह के भीतर 'करीब 200 टेलीविजन के विज्ञापन, 300 रेडियो विज्ञापन और एक हजार से अधिक प्रेस और अन्य क्षेत्रों के लिए विज्ञापन तैयार किए। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि किस सीमा तक मीडिया व मास मीडिया का प्रयोग बीजेपी ने अपने चुनावी अभियानों के अंतराल में किया। केवल बीजेपी ही नहीं अपितु कांग्रेस ने भी मीडिया और मास मीडिया का उपयोग किया परंतु वह एक रणनीति के स्तर पर इसका प्रयोग नहीं कर पाए। जिस प्रकार बीजेपी ने किया साथ ही दोनों दलों के चुनाव अभियान या मीडिया या मास मीडिया के प्रयोग में एक बड़ा अंतर यह था कि एक ओर बीजेपी ने जहां ऐसे विज्ञापनों का प्रयोग किया है जिसे आम जनता सरलता से समझ लेती थी वहीं कांग्रेस के विज्ञापनों में एक उलझाव सा प्रतीत होता था जिसे जनता समझ नहीं पाई।

परंतु यह कहना ही गलत होगा की मीडिया ने मोदी लहर बनाई। तो शायद करोड़ों ने जो वोट मोदी को दिए और उनमें आस्था व्यक्त की उसका भी अनादर होगा। परंतु सीधे रूप से न सही पर मीडिया ने लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से वोट बनाये उसको हम कुछ इस प्रकार से कई उदाहरणों से देख सकते है।

अभी तो हमने यह देखा की राजनीतिक दल ने किस प्रकार का मीडिया प्रयोग किया। परंतु क्या मीडिया ने अपना लोक दायित्व निभाया? लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था में मीडिया की भूमिका अहम व महत्वपूर्ण होती है। भारत जैसे विशाल लोकतान्त्रिक देश मे तो यह बहुत ही अहम हैक्योकि लोग अपनी सूचना के लिए सबसे भरोसेमंद माध्यम मानते है। साथ ही लोग यह मानते हैं कि मीडिया सरकार के हर पहलू से लोगो को रूबरू करता है। वह ही अलोकतान्त्रिक हो तो लोकतन्त्र का एक खंभा ध्वस्त हो जाएगा इसलिए जरूरत है इसमे कुछ मूलभूत सुधारों की ताकि लोकतन्त्र सुरक्षित बना रह सके। मै इस वाद–विवाद मे नहीं जाऊँगा कि मीडिया मे कितने घोटाले हुए। मै बस मोडिया से लोक हितैशी और लोकतान्त्रिक सूचना लोगो तक पहुँचाए, जो किसी भी माध्यम से प्रायोजित न हो और मीडिया लोकतान्त्रिक मूल्यो पर खरा उतरे।

♦♦♦♦♦

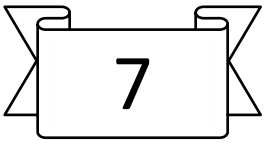

चुनावी बाजारतंत्रः पद्वत्ति एवं प्रकार

आकांक्षा परिहार

जय नारायण व्यास विश्व विद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

चुनाव या निर्वाचन, लोकतंत्र की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा जनता अपने प्रतिनिधियों को चुनती है। चुनाव के द्वारा ही आधुनिक लोकतंत्रों के लोग विधायिका के विभिन्न पदों पर आसीन होने के लिए व्यक्तियों को चुनते हैं। पूरे भारत वर्ष में चुनाव एक उत्सव की तरह होता है। भारतीय गणराज्य में चार प्रकार के चुनाव आम चुनाव (लोकसभा), राज्य विधानसभा चुनाव, राज्यसभा चुनाव (उच्च सदन) एवं स्थानीय निकाय चुनाव होते हैं। चारों चुनाव में जमकर धनवर्षा होती एवं पूंजीवादियों, उद्योगपतियों की अहम भूमिका होती है। चुनाव के दौरान पूंजीवादियों द्वारा जहां पैसा लगाया जाता है उसे चुनावी बाजार कहा जाता है। इस चुनावी बाजार के उपकरण निम्नलिखित हैं।

1. राजनीतिक दाहांकन **(Political Branding)**
2. अंकीय/आंगुलिक विपणन **(Digital Marketing)**

एक ब्रांड एक नाम या एक प्रतीक है जो उत्पाद/सेवा या एक संगठन को दूसरों से खुद को अलग करने में मदद करता है।

हर ब्राण्ड की अपनी उत्पति की कहानी है :–

विश्वासों का एक सेट है, यह एक मूल्य व एक रवैया जो वह रखता है, जिससे सब उस पर विवास करें।

भारत में एक सेवा के रुप में राजनीति की उत्पति :–

भारत बाहरी लोगों द्वारा छापे का शिकार हुआ है, अपनी सम्पति और सम्पति को शासको को भी खो दिया था। तैनूर, गजनी **Alerander**, तुर्क, मंगोल, राष्ट्रकूट जैसे राजवंशो की स्थापना, मुगलों ने भारत के विशाल साम्राज्य को एक इतिहास के रुप, समय के साथ शासन किया है। अंग्रेजों के जाने के बाद ही, भारत ने अपनी पहचान एक लोकतांत्रिक देश के रुप में बनाई। तब शक्ति काफी केन्द्रीकृत थी। जैसे ही भारत के लोगवासी निकाय चुनने में एक महत्वपूर्ण हिस्सेदार

बने, भारतीय राजनीति एक ब्रांड के रुप में उभरने लगी। एक ब्राण्ड की तरह हर राजनीतिक दल का एक एजेण्डा होता है, लोगों के प्रति सेवा करने के लिए मान्यताओं का एक समूह भारत के लोग उनके लक्षित समूह है जिनका ध्यान रखना बहुत जरूरी है, यदि वे सत्ता में आना चाहते है। जीतने वाली पार्टी प्रमुख ब्राण्ड और विपक्षी और अन्य दलों को प्रतिस्पर्धी ब्राण्डों के रुप में देखा जा सकता है।

राजनीतिक ब्राडिंगः वर्तमान पहलू

भारत के संदर्भ में अब व्यक्तिगत नेता पार्टी की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। ब्राडिंग की इस शैली को कारगर बनाने के लिए ध्यान 2014 के लोकसभा चुनाव पर जिसमें भाजपा की ऐतिहासिक जीत देखी गई। पार्टी के समग्र चुनाव प्रचार के लिए तय की गई थीम ब्राण्ड मोदी और 'अच्छे दिन आएंगे' के वादे के इर्द–गिर्द घुमती है।

उपभोक्तावादी अंतदृष्टि से **Consumer Insight**

गुजरात में मोदी की उपलब्धियों के कारण वे पहले से एक प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित ब्राण्ड थे, क्योंकि उनके स्थानीय सम्बन्ध सबसे मजबूत थे। इनसे पहले बीजेपी के नेता एल.के आडवाणी और अटल बिहारी वाजपेयी अपने चुनावों में ब्राण्ड एंबेसडर के रुप में उभरे थे। भारतीय कवि व गीतकार प्रसून जोशी जिन्हे कई ब्राण्डों के विज्ञापन में अपार अनुभव है। उन्होंने अपने प्रचार का एक विषय निर्धारित किया 'अच्छे दिन' जिससे जनता आकर्शित हो सके। यह विषय उनके आकर्षक नारे अबकी बार, मोदी सरकार के साथ स्थापित किया गय। इस नारे ने देश के विशाल वर्ग को भावनात्मक रुप से अपनी तरफ जोड़ लिया था। वर्तमान में हर दूसरी राजनीतिक पार्टी जनता को लुभाने के लिए मार्केटिंग रणनीति को लागू करने में सक्रिय है। इस मार्केटिंग में घोर पूजीवादियों की बहुत अहम भूमिका, जिसकी पार्टी की रणनीतियां उपभोक्ता की अंतदृष्टि का ख्याल रखती है वहीं पूंजीवादी अपना धन व्यतीत करते है ताकि चुनाव जीतने के बाद भरपाई कर सके। ए.डी.आर. 2014 की रिपोर्ट के तहत 2014 के जनरल चुनाव में 3870 करोड़ रुपये खर्च हुए थे। यह राशि 2009 1114 करोड़ रुपये के चुनाव की तुलना में तीन गुना थी। अब बात यह है कि आखिर ये राशि आती कहां से हैं द्य अगर हम बात करें आम आदमी की तो वो सिर्फ 2000 रुपये जो कि केश में दान के रुप में कर सकता है और फिर आते बड़े–बड़े उद्योगपति, समूह। जो करोड़ो रुपए दान करते है। निर्वाचन आयोग के नियम के हिसाब से अगर कोई 2000 से ज्यादा रुपए दान करता है किसी पार्टी को तो उसे निर्वाचन आयोग को सूचित करना

होगा। 2014 में वित्त मंत्री अरूण जेटली ने एक बयान देते ये भी कहा था कि इस प्रक्रिया में जिसमें पार्टी पर उद्योगपति कितना धन लगा रही है, वो प्रक्रिया पूर्ण रुप से पारदर्शी होनी चाहिए।

डिजीटल मार्केटिंग–

डीएम उत्पादों को ऑनलाइन बढ़ावा देने के लिए एक विपणन पद्धति है। इस डिजीटलाईजेशन के युग में अगर सबसे बड़ा किसी वर्ग का योगदान है तो वो है युवा वर्ग और युवा वर्ग का ध्यान आकर्शित करने के लिए भारतीय राजनीतिक पार्टियों ने डिजीटलाईजेान को अपना रास्ता बनाया। वह एक महत्वपूर्ण कदम रहा 2014 की मोदी की जीत का द्य इन्होंने एक सोशल मीडिया प्लेटफार्म, फेसबुक पर अलगकृअलग आधिकारिक पेज बनाकर अपना प्रचार किया। जैसे **My Gov India** यह पेज उज्ज्वल योजना से सम्बन्धित है नामुमकिन अब मुमकिन है । भारतीय चुनाव में डीएम की अहम भूमिका है। खासकर इस कोरोना काल में।

Facebook Ad Library Report India के तहत भारत में बीजेपी चुनाव प्रचार पर लगभग 17 करोड़ रुपये खर्च करती है हर हफ्ते में। हालांकि चुनाव आयोग ने चुनावों के लिए सोशल मीडिया पर राजनीतिक विज्ञापनों को पूर्ण स्क्रीन करने के लिए समितियों का गठन किया, यह कितना प्रभावी है ये अलग बात है। इस प्लेटफार्म की विशालता को देखते हुए इन्टरनेट पर पाए जाने वाले राजनीतिक विज्ञापनों की निगरानी उतनी सटीकता से नहीं की जा सकती जितनी टीवी, समाचार पत्रों या रेडियों पर की जा सकती है।

(एक राष्ट्र, एक चुनाव)

1. इसके तहत भारत में लोकसभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ करवाने के विषय पर व्यापक चर्चा की जा रही है।
2. ऐसा नहीं है भारत में एक राष्ट्र एक चुनाव की मांग पहली बार उठ रही है। इससे पूर्व भी 1952, 1957, 1962, 1967 के चुनावों में राज्य की विधानसभाओं और लोकसभा के चुनावों का आयोजन साथकृसाथ करवाया जा चुका है। मगर 1968 में यह क्रम टूट गया। इस तरह यदि भारत में एक साथ चुनाव की प्रक्रिया को पुनः स्थापित करने की बात की जा रही है तो इसमें कोई बड़ी समस्या नहीं है।
3. 'एक राष्ट्र एक चुनाव' की क्रियान्वयन के बाद आमजन को बार–बार आचार संहिता के बंधन से राहत मिलती है। इससे शिक्षा, न्याय, चिकित्सा जैसे मूलभूत कार्यों में बाधाएं उत्पन्न

होती हैं। यदि भारत में एक साथ सभी चुनाव होने लगे तो काले धन के प्रवाह पर भी रोक लग सकेगी। इस व्यवस्था को अमल में लाने के बाद सामाजिक सोहार्द एवं भाईचारे को बढ़ावा मिलेगा।

एक निकास कहीं और प्रवेश है– **Tom Stoppard**

एक जनमत सर्वेक्षण किसी भी मुद्दे के बारे में आबादी के नमूने से जनता की राय का एक सर्वेक्षण है। यह कई मायनों में उपयोगी है।

एक **Exit Poll** जो मतदाताओं का मतदान है। जिस पर उन्होंने अपना मताधिकार प्रयोग करने के बाद दिया है, विशवसनीयता संदर्भ में बेहतर है। चुनाव परिणामों परिणाम पर इसका कोई असर नहीं होता जहां राय पोल से पड़ता है।

आम तौर पर जनमत सर्वेक्षणों का इस्तेमाल अक्सर चुनाव से पहले मतदाताओं के मनोदशा को पकड़ने के लिए किया जाता है। हालांकि जनमत, सर्वेक्षण लोगों की अनुकूलता का एक सैद्धान्तिक अनुमान देते है। लेकिन यह विवसनीय नहीं हो सकता है। इस तथ्य के कारण कि यह केवल लोगों के आनुपातिक राशि से एकत्र किए डेटा नमूने से अनुकूलता का एक सांख्यिकीय अनुमान है।

इस तरह के स्टैंड आम तौर पर व्व में दिखाए गए उनके अनुकूलता के आधार पर पार्टियों के बीच भिन्न होते हैं। लेकिन किसी को यह समझना चाहिए कि जनमत सर्वेक्षण पर प्रतिबंध संविधान के अनुच्छेद 19(1) द्वारा गारन्टीकृत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन करता है और एक जनमत सर्वेक्षण एक ही लेख के निम्नलिखित उपखण्ड में रखे गए उचित प्रतिबन्धों में नहीं है।

एक मतदाता एक निर्वाचक मंडल के लोगों के लिए एक उम्मीदवार की उपयुक्तता पर निर्णय लेने के लिए एक आवयक उपकरण है, उन्हें प्रतिबंधित नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि केवल मान्यता प्राप्त प्रदूशकों तक सीमित होना चाहिए। दूसरी ओर म्पज च्वसस जो सिर्फ चुनाव का रियल टाईम अपडेट दिखाते हैं उन्हें मौजूदा प्रतिबंधों के साथ रखा जा सकता है।

एक जनमत सर्वेक्षण विचार का कोई विकल्प नहीं है–

एक स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव दो का एक स्वस्थ लोकतंत्र के संकेत दिखाता है। चुनाव के माध्यम से किसी देा के नागरिक सरकार की नीतियों और काम करने के लिए स्वीकृति या

इनकार व्यक्त करते हैं। चुनाव देश में लोकतंत्र को बनाए रखने और इसे अराजकता और तानाशाही से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वह अपने लोगों के हाथों में भाक्ति प्रदान करता है और उन्हें देश में अपनी पंसद की सरकार बनाने का विकल्प देता है। यह एक ऐसा उपकरण है जो हर वर्ग और समुदाय को अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से उठने और बोलने में मदद करता है। यह सरकार और उसकी नीतियों पर भी नजर रखता है क्योंकि उसे चुनावों के दौरान जनता के सामने आना होता है और यदि उनकी नीतियां और कार्य जनता के कल्याण के खिलाफ है तो उन्हें बदला जा सकता है।

♦♦♦♦♦

8

चुनाव प्रणालीः लोकतान्त्रिक वैधता का प्रश्न

चित्रा राजौरा

शोधार्थी, रूस एवं मध्य–एशिया अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय

लोकतंत्र का सफलतापूर्वक संचालन चुनाव प्रक्रिया से संभव होता है नहीं तो वे एक प्रभुसत्तावादी शासन का रूप धारण कर लेता है और यदि निर्वाचन व्यवस्था दोषपूर्ण है तथा निर्वाचन तंत्र अकुशल तथा भ्रष्ट है तो लोकतंत्र व्यवस्था अवैध बनकर रह जाएगी। इसलिए लोकतंत्र की सफलता के लिए चुनाव व्यवस्था का निष्पक्ष होना अतिआवश्यक है। अतः चुनाव प्रणाली लोकतंत्र की रीड तथा लोकतान्त्रिक वैधता का एक यंत्र है। प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ वैज्ञानिक शुम्पीटर ने चुनाव को "लोकतंत्र का हृदय स्थल" कहा है। इस आधार से किसी भी शासन प्रणाली की पहचान उसकी संस्थाओ से की जाती है। इसलिए लोकतांत्रिक प्रणाली में चुनाव प्रक्रिया अन्य शासन प्रणाली से अपनी भिन्न पहचान बनाती है।

वर्तमान में विश्व के सबसे सफल लोकतान्त्रिक व्यवस्था के इतिहास में पहली बार, और संभवतः प्राचीन लोकतंत्र के इतिहास में, 124 वर्षीय, संयुक्त राज्य अमेरिका और भारत में महामारी के अंतर्गत चुनाव प्रक्रिया को प्रारंभ किया है। इसके अंतर्गत आगामी चुनावो में मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट में सामाजिक दूरी का एक नया नियम जोड़ा गया है। अंततः नेताओ को रोड शो, रैलियों में लाखों लोगो को बुलाने की तुलना में अन्य विकल्पों का उपयोग करना आवश्यक हो गया है। निष्कष के रूप से, यह कह सकते है की वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखे हुए लोकतंत्र की व्यवहारिक प्रक्रिया में पूर्ण अंतर देखा गया है। जहाँ एक तरफ, लोकतंत्र में जनसहभागिता एक महत्वपूर्ण तथ्य है। लोकतंत्र में जनता की सम्पूर्ण भागीदारी होती है जिसके अंतर्गत जनता के समस्त विषयों में एवं समस्त राजनीतिक प्रक्रियाओं पर अपना नियंत्रण रखती है। लेकिन दूसरी ओर, वर्तमान समय, कोरोना वायरस महामारी चुनावी प्रक्रिया के सुचारू रूप से संचालन को प्रभावित कर रहा है जिसके कारण राष्ट्र की लोकतांत्रिक वैधता को चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इसका जीता–जागता उद्धरण अमेरिका में हुए राष्ट्रपति चुनाव (नवम्बर 2020) से ज्ञात होता है, भारत में चल रहे विधानसभा चुनाव और विश्व स्तर में हो रहे चुनाव से ज्ञात होता है। तथ्यात्मक रूप से, इस महामारी से विश्व में 1.56 मिलियन लोगो की मृत्यु हुई है।

जिसमे अमेरिका के कुल 286 हजार लोगो की मृत्यु तथा भारत में 141 हजार लोगो की मृत्यु दर्ज की गई है साधारण सी बात है इसका नकारात्मक प्रभाव वोटिंग संख्या पर पड़ा है।

इस लेख का मुख्य उद्देश्य यह है की कोरोना वायरस महामारी जिससे विश्व के देश न केवल आर्थिक संकट का सामने कर रहे है। बल्कि भुखमरी, स्वास्थ्य, समाजिक अलगाव, शिक्षा तथा चहुंमुखी रूप से प्रभावित हो रहे है। इसके अंतर्गत चुनाव को सफलतापूर्वक सम्पन्न करना कहा तक उचित होगा? लोकतंत्र को किस प्रकार वैधता कहा जा सकता है? आदि प्रश्नों का एक आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है विशेषकर भारत जैसे लोकतान्त्रिक देश जिसमे एक तरफ, दुनिया में सबसे ज्यादा मतदाता है तो दूसरी तरफ, सबसे अधिक लोग इस महामारी से पीड़ित है। इस अंतराल में चुनाव कराना और जवाबदेही शासन के लिए हानिकारक बन जाती है।

सबसे पहले यह अध्ययन करना महत्वपूर्ण है की चुनाव या निर्वाचन प्रक्रिया लोकतान्त्रिक व्यवस्था को किस प्रकार वैधता प्रदान करती है? निर्वाचन प्रक्रिया वास्तव में सामूहिक फैसलों का औपचारिक कार्य होता है जो आगामी व्यवहार की धारा से उत्पन्न होता है। वस्तुतः एक निष्पक्ष सरकार के सन्दर्भ में वास्तविक प्रमाण निर्वाचन तंत्र का अभिलेख ही होता है। यह बिना विवाद के स्वीकार किया जाना चाहिए, की निर्वाचन एक क्रिया–कलाप है, जो सरकारों के परिवर्तन चक्रो को निरंतरता प्रदान करती है। जैसे की यह पूर्व ज्ञात है की चुनाव होने से पूर्व विभिन्न दलों को चुनावो में मतदान के लिए जनता के समक्ष अपने भविष्य–कार्यो का ब्यौरा देते है, वाद–विवाद किया जाना, वोट के लिए अपील करना, प्रचार–प्रसार करना, तथा सभा–सम्मेलन किये जाते है। वे किस प्रकार के नेता को शासको के रूप में चाहते है इस सम्बन्ध में अपनी पसंद की अभिव्यक्ति करने की व्यवस्था करना आदि महत्वपूर्ण कार्य को ध्यान में रखा जाता है। तब जाकर चुनाव परिणाम वैध कहे जा सकते है। लेकिन कोरोना वायरस महामारी का अंतराल इसका अपवाद है। ऐसे समय में चुनाव प्रक्रिया में आकस्मिक कठिनाई के समय अनेक बार अपनी स्थिति को आसक्त व असहाय महसूस किया गया है।

आधुनिक युग, उच्च–तकनीक की माँग करता है तथा अधिक से अधिक कार्य इलेक्ट्रॉनिक–माध्यम से सम्पन्न किये जा रहे है। लेकिन कोरोना वायरस महामारी के कारण चुनाव और निर्वाचन प्रक्रिया को भी ई–माध्यम से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है। प्रश्न यह है– यह कहाँ तक वैध और निष्पक्ष हो सकते है? इस दौरान, चुनाव के समय एक व्यक्ति दूसरे के साथ बातचीत करता है, जितनी देर तक बातचीत होती है, कोविड–19 का जोखिम उतना ही अधिक फैलता है। केवल एक ही दिन मतदान करने वाले व्यक्तियों के साथ चुनाव कोविड–19 के प्रसार

के लिए अधिक जोखिम बन सकता है। क्योंकि वहाँ बड़ी भीड़ और लम्बे समय तक प्रतिक्षा करना होता है। कोविड–19 महामारी के प्रसार को रोकने के मध्य–नजर विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा चुनाव प्रक्रिया के लिए विशेष गाइडलाइन जारी की गयी है। तथा उसका शक्ति से पालन करने पर भी जोर दिया गया है। प्रत्येक राष्ट्र द्वारा इस आधार पर अपने निर्वाचन आयोग द्वारा इन नियमों को अपनी चुनावी प्रक्रिया में जारी भी किया गया है। लेकिन यह कहना मुश्किल हो जाता है की जनता और सरकार द्वारा इसका पालन किस–स्तर तक किया जाता है? अन्य संदर्भ में, निर्वाचन कानूनों की दुर्बलता, चुनावो में काले धन की भूमिका, सरकार तंत्र का दुरूपयोग, प्रत्याशियों द्वारा निर्धारित सीमा में खर्च, आचार–सहिंता का उल्लंघन, मतदाताओं द्वारा आस्था के प्रति विश्वासघात आदि विभिन्न धटनाओं ने सम्पूर्ण निर्वाचन व्यवस्था और उसके प्रावधानों में समयानुकूल परिवर्तन आदि भ्रष्ट प्रक्रिया का ज्ञात होना अधिक हद तक प्रभावित होगा।

अमेरिका में हुए राष्ट्रपति चुनाव के दौरान (2020) चुनाव अधिकारियो और मतदान कर्मियों के लिए निम्न सिफारिशे की गयी जैसे बीमार होने पर या कोविड–19 वाले व्यक्ति के साथ निकट सम्पर्क के बाद घर में रह रहे मतदान कर्मियों को शिक्षित करना की उन्हें कब घर रहना चाहिए और कब कम पर लौट सकते है। पोल कार्यकर्ता जो बीमार है, जो सीडीसी (CDC) द्वारा मापदंड का पालन करना होगा। हाथों की स्व्च्छता और मास्क के शिष्टाचार का ध्यान करना इसके अंतर्गत मतदान प्रक्रिया के प्रत्येक चरण में हैं, सैनिटाइजर प्रदान करें, और इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग उपकरणों के साथ संगत न होना, सभी श्रमिकों के बीच मास्क के उपयोग की सिफारिश सुदृढ़ करना सोशल डिस्टेन्सिंग, इसके अंतर्गत मतदाताओं को कम से कम 6 फीट दूर रहने के लिए प्रोत्साहित करें। स्थलों और कार्यकर्ताओं को यह याद रखने में सहायक करने के लिए मतदान स्थल संकेत या अन्य दृश्य संकेत प्रदान कर सकते हैं जैसे कि फ्लोर मार्किंग, डिकल्स, या चॉक के निशान, स्वस्थ वातावरण कीटाणुरहित सतहों को बनाए रखना, मतदान संबंधी उपकरणों को स्वच्छ और कीटाणुरहित करना, वोटिंग मशीन, लैपटॉप, टैबलेट, कीबोर्ड, बैलेट एक्टिवेशन कार्ड और अन्य पुनः प्रयोज्य वस्तुओं को नियमित रूप से कीटाणुरहित किया जाना चाहिए। मतदान स्थल बंद होने के बाद, सभी उपकरण और परिवहन मामलों को निर्माता और उनके निर्वाचन कार्यालय को वापस करने से पहले निर्माता के निर्देशों का पालन करके कीटाणुरहित किया जाना चाहिए। डाक–मतपत्रों में मेल–इन मतपत्रों को संभालने वाले श्रमिकों को अक्सर हाथ की स्वच्छता का अभ्यास करना चाहिए। मतदान स्थानों पर सीधे भेजे गए ई–मेल मतपत्रों के जोखिम को कम करने के लिए प्रसंस्करण से पहले तीन घंटे तक रखा जा सकता है। ई–मेल मतपत्रों के लिए प्रयुक्त मशीनों को नियमित रूप से स्वच्छ और कीटाणुरहित

किया जाना चाहिए। वोटिंग मशीनों और संबंधित इलेक्ट्रॉनिक्स के लिए उपयुक्त सफाई और कीटाणुशोधन प्रक्रियाओं के लिए उपकरण निर्माता के निर्देशों के बाहरी संकेत का पालन करें। इसी प्रकार, मतदाताओ के लिए सिफारिशे जारी की गयी, कोविड–19 के प्रसार को धीमा करने के लिए स्वस्थ व्यवहार का अभ्यास करें आदि।

दूसरी तरफ, राष्ट्रपति प्रतिनिधि ट्रम्प और डेमोक्रेट बिडेन दोनों ने देश भर में मतदाताओं तक पहुँचने के अपने प्रयासों में अलग–अलग तकनीको का उपयोग किया था। यद्यपि, कोरोनावायरस महामारी से संयुक्त राज्य अमेरिका में मरने वालों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है जिसके कारण से, नामांकित लोगों को अपनी अभियान रणनीतियों के साथ रचनात्मक होने के लिए भी मजबूर किया गया है। कोविड–19 मामलो में वृद्धि के बावजूद, ट्रम्प ने देश भर के राज्यों में कई व्यक्तिगत रैलियों की मेजबानी की है। यर्थाथ में, स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र विभाग के एक अध्ययन ने कोविड–19 विषयों के हजारों और सैकड़ों लोगों की मृत्यु को उनके विशाल चुनाव अभियान रैलियों से जोड़ा गया है। इस बीच, डेमोक्रेटिक पार्टी के उम्मीदवार जो बिडेन ने इन–पर्सन इंटरैक्शन को न्यूनतम रखा है। उनके अभियान ने समर्थकों के छोटे समूहों के साथ कई आभासी रैलियों और सामाजिक रूप में वर्चुअल और स्केल–डाउन नेशनल कन्वेंशन से विकृत घटनाओं का आयोजन किया गया। यह वायरस राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति पर चर्चा का मुख्य केंद्र बिंदु भी था। बिडेन ने महामारी से निपटने के लिए ट्रम्प की निरंतर आलोचना की है, जिसने देश में 230,000 से अधिक लोगों को पहले ही मार दिया है।

इसी प्रकार, भारत जैसे विशाल, विविधतापूर्ण वाले देश में काविड–19 महामारी के अंतर्गत विधानसभा सभा चुनाव (बिहार, छत्तीसगढ़, गुजरात, झारखण्ड, ओड़िसा, राजस्थान, नागलैंड मणिपुर, यू.पी., एम.पी. आदि) कराने का अनुभव हो चुका है। भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा भी कोविड–19 के प्रसार को ध्यान में रख कर चुनाव प्रक्रिया के सचारू रूप से संचालन की विभिन्न सिफारिशे प्रदान की है। लेकिन भारत में स्थिति काफी निराशाजनक रही है। जैसे की गृह मंत्रालय द्वारा 12 राज्यों के लिए दिशा–निर्देशों को संशोधित किया गया है। मुख्य रूप से चुनाव आयोग ने कहा कि कोविड–19 रोगियों को भी लोकतांत्रिक अभ्यास में भाग लेने की अनुमति दी जाएगी। जिसके बाद कोविड–19 रोगियों को दिन के आखिरी घंटे में मतदान करने की सुविधा देने के लिए एक घंटे का मतदान समय बढ़ाया गया। चुनाव प्रचार के अंतर्गत सार्वजनिक समारोहों में सामाजिक भेद मानदंडों का पालन करना होगा। संपूर्ण चुनाव अभ्यास के समय

मास्क पहनना अनिवार्य होगा तथा सभी मतदान केंद्रों में थर्मल स्क्रीनिंग, साबुन और सैनिटाइजर जैसी अन्य सुविधाओं का ध्यान रखा जायेगा।

परिणामस्वरूप, कोविड–19 महामारी के मध्य चुनाव में इन राज्यों में राजनीतिक रैलिया आयोजित करने की अनुमति दी गयी। जिसके कारण, पटना चुनाव में राष्ट्रीय जनता दल के नेता तेजस्वी यादव द्वारा 19 रैलियों का आयोजन किया गया जो बिना किसी दिशा–निर्देशों को पालन किये संचालित कि गई। इस प्रकार यह कहा जा सकता है की इस राजनीतिक दाव पेंचो में राजनीतिक नेता अपने हित साधने के लिए जनता को राजनीतिक पंगु बना दिया है। दूसरा, ई–गवर्नस तथा इलेक्ट्रॉनिक तकनीकी से अनभिज्ञता यद्यपि सत्य यह है की लांखो भारतीय गांव तथा शहरी झुग्गी–झोपड़ी की अविवेक जनता आडम्बर व वास्तविकता में अंतर करने में असमर्थ है तथा इसमें भावनात्मक लामबंदी को सम्भवना कम ही है, फिर भी इसके वोट इनकी समाजिक, आर्थिक स्थिति से पृथक नहीं है. अन्य तरफ, अशिक्षित, तकनीकी ज्ञान के अभाव तथा उन तक लोगों की पहुँच में कमी, कोविड–19 के चलते सरकार द्वारा अधिक से अधिक कार्य इन्टरनेट के माध्यम से भी सम्पन्न किये जा रहे है जिससे लोगो को समक्ष जानकारी प्रदान की सके। लेकिन भारत में आधे से अधिक लोगो तक इसका अपवाद है। संक्षेप में कहा जा सकता है की भारत में निम्न स्तर की तकनीकी व्यवस्था स्थापित है गाँव के गरीब और पिछड़े लोगो का इससे दूर तक कोई सम्बन्ध नहीं है। तीसरा, निर्वाचन आयोग के माध्यम से सरकार, राजनीतिक दलों व आम जनता को अवगत कराया जाता रहा है। निर्वाचन आयोग का सदैव से यह विचार रहा है की निर्वाचन प्रक्रिया स्वच्छ, स्वतंत्र रूप से सम्पादित हो, लेकिन कोविड–19 जैसी महामारी के चलते निर्वाचन आयोग को विभ्भिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

अतः उसके द्वारा स्वतंत्र व निष्पक्ष चुनाव सम्पन्न कराने के लिए सभी उपाय और सिफारिशे प्रस्तुत की गयी है। जिसमें अत्यधिक आचार सहिंता का उल्लघंन किया गया है। जैसे रैलियों का आयोजन, समाजिक समूह का गठन और वाद–विवाद का आयोजन आदि। चौथा, भारत के अन्य राज्यों में सार्वजनिक स्वास्थ्य ढांचे का निम्न स्तर है। इसके आधार पर, इस तरह के समय में, वैक्सीन का वचन एक रामबाण की भांति करर्य करता है, लेकिन हर कोई आश्वस्त नहीं है। लेकिन राजनीतिक रैलियों में चुनाव के समय भीड़ जुटी रही है, जिससे लोंगों का यह विश्वास हो गया की कोविड–19 एक राजनीतिक षडयंत्र था। इसके बावजूद, इसे पहली बार है राजनीतिक एजेंडे में उच्च स्थान दिया है। हालंकि यह स्वभाविक है की कोविड–19 भविष्य के चुनावों की एक मुख्य विशेषता रहेगी, भारत और दुनिया भर में, महामारी के चलते स्वास्थ्य को

एक प्रमुख सुरक्षा का विषय बन गया है. जोकि जनता के हित में है। पांचवा, जनता तीन स्तर पर चुनावी प्रक्रिया में भागीदारी करने पर मजबूर है पहला, महामारी की प्रतिक्रिया, बड़े स्तर पर स्वास्थ्य का ढांचा और भारतीय अर्थव्यस्था की स्थिति है। इसके अलावा, मतदाताओं से अपेक्षा की जाती है की वे सभी प्रमुख दलों द्वारा चुनावी वादों के बारे में अपने ज्ञान के आधार पर सूचित चुनाव करे। लेकिन, सोशल मीडिया के अत्यधिक उपयोग और राजनीतिक अभियान के लिए संचार के अन्य आभासी माध्यमों को भारत में बने रहने के लिए विशाल डिजिटल विभाजन के कारण विभिन्न दलों के संसाधन क्षमताओं में अधिक अंतर देखने को मिला है जो नकारात्मक रूप से मतदाताओं का एक बड़ा भाग राजनीतिक दलों द्वारा किये गये आश्वासन और वचनों से अनभिज्ञ रह जाता है। इसका अर्थ यह है की मतदाताओं को यह सुनिश्चित करना कठिन हो जाता की उनके द्वारा चयनित नेता राजनीतिक रूप से वैध शासन के योग्य है या नहीं। क्योकि राजनीतिक निर्णय नेता द्वारा लिए जाते है जनसाधारण के द्वारा नही किये जाते।

कोविड–19 महामारी के समय चुनाव प्रक्रिया सम्पन्न कराना एक प्रकार से चुनौतीपूर्ण रहा है। चूँकि चुनावों में गहन सार्वजनिक सम्पर्क और जन संचार की आवश्कता होती है, इसलिए यह आशंका बढ़ जाती है की समाजिक गड़बड़ी और भीड़ एकत्रित होने से बचने जैसी सावधानियां अनिवार्य रुप से चुनाव को समस्या मुक्त आचरण को बाधित न करे। इन दो देशों (भारत और अमेरिका) में हुए चुनाव प्रक्रिया के मध्य नज़र यह विश्लेषण किया जा सकता है। विश्व कोरोना वायरस जैसे महामारी का समाना कर रहा है यह निर्विवादी रूप से सत्य है की चुनाव के निर्बाध आचरण, लोकतंत्र की निरंतरता के लिए आवश्यक है क्योंकि लोकतान्त्रिक चुनावों का इस प्रकार से अभूतपूर्व जीवन संकट के समय में विशेष महत्व रखता है। प्राथमिक रूप से, सरकार को राजनीतिक सत्ता से ऊपर उठ कर चुनाव प्रक्रिया को एक उचित समय–सीमा में सम्पन्न करने चाहिए। क्योंकि यह समय राजनीतिक दावपेंच का नहीं है बल्कि इस महामारी का सामने करने तथा आर्थिक स्थिति में सुधार करने का है। इस सकंपूर्ण स्थिति में राजनीतिक नेताओं को अपने हित साधने के लिए जनता को एक साधन के रूप में प्रयोग करने के स्थान पर जनता के जीवन स्तर में सुधार किया जाना चाहिए। क्योंकि यह भविष्य चुनाव के लिए राजनीतिक नेता को जनता के प्रति विश्वास प्राप्त कराने के लिए यह उचित अवसर है जिसकी सहायता से नेता अपनी सत्ता को वैध माध्यम से स्थापित कर सकते है जो एक स्वस्थ्य लोकतंत्र को स्थापित करने की प्रतीक बन सकता है।

♦♦♦♦♦

9

चुनाव में मत और मतदानोत्तर सर्वेक्षणों के परिणामों का बाजारीकरण

डॉ. अमित अग्रवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर (वाणिज्य), राजकीय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर, उत्तर प्रदेश

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है और सर्वाधिक मतदाओं की संख्या वाला लोकतांत्रिक देश है। वर्तमान मे यह सत्य है कि मतदाता चुनाव को भी क्रिकेट खेल जैसा मनोरंजन का एक माध्यम समझने लगे हैं। मास मीडिया और सोशल मीडिया के इस युग में चुनाव का बाजारीकरण शुरू हो गया है, मीडिया मतदाता को एक उपभोक्ता की दृष्टि से देखते है और लाभ के उद्धेश्य से चुनाव को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है जिससे उसकी उत्सुकता में वृद्धि हो। उपभोक्ताओं की पसंद को ध्यान में रखकर चुनाव घोषणा के पश्चात् ओपिनियन पोल और एग्जिट पोल आयोजित किये जाते हैं, फिर भले ही वैज्ञानिक सर्वेक्षण से कोसों दूर हो या राजनीतिक दल से इस प्रकार के दल भुगतान समाचार दिखाने में भी संकोच नहीं करते हैं।

चुनाव जैसे महत्वपूण कार्यक्रम को भी यह सामान्य सर्वेक्षण की भांति ही मानते हैं और विवाद उत्पन्न कर अपनी टीआरपी बढ़ाते है। सर्वेक्षण के लिए योग्य कंपनियां और कर्मचारियों की भारी कमी होती है जो सर्वेक्षण की गहनता को समझ सके। सामान्यतः वह कौन सी परिस्थितियां हैं जो चुनाव सर्वेक्षण परिणाम और यर्थाथ चुनाव परिणामों में अंतर उत्पन्न करती हैं, जिसके कारण इनकी विश्वसनीयता पर संदेह उत्पन्न होने लगा है और कुछ समूह द्वारा इन पर प्रतिबंध की माँग उठने लगी है। इनकी विश्वसनीयता पर संकट उत्पन्न होना कहीं इनके बजारीकरण का परिणाम तो नहीं है। भारत में चुनाव की घोषणा के पश्चात चुनाव सर्वेक्षण की भरमार लग जाती है। मतदाताओं में इस बात को लेकर चर्चा होने लगती है कि इस बार कौन सी पार्टी या गठबंधन सरकार बनाएगी। यह स्थिति लोकसभा चुनाव और विधानसभा चुनाव में होती है। चुनाव में सर्वेक्षण कई प्रकार के होते हैं। इसमें मुख्य रूप से दो सर्वेक्षण प्रचलित हैं– पहला मत सर्वेक्षण (ओपिनियन पोल) दूसरा सर्वेक्षण निर्गम मतानुमान या मतदानोत्तर सर्वेक्षण।

(क) जब चुनाव की दिनाँक घोषणा के पश्चात किंतु मतदान से पूर्व मतदाताओं के विचार जाने जाते है, वह सर्वेक्षण ओपिनियन पोल कहलाते हैं। सर्वेक्षण के लिए सैंपल साइज जितना अधिक बड़ा होता है, उतने ही परिणाम सही होने की संभावना बढ़ जाती है।

(ख) निर्गत मत सर्वेक्षण या एग्जिट पोल के अंतर्गत मतदान वाले दिवस पर जो मतदाता वोट डालकर मतदान स्थल से बाहर आते है, उनका विचार लिया जाता है और उसके आधार पर परिणाम का अनुमान लगाया जाता है। तब ऐसे सर्वेक्षणों को एग्जिट पोल कहते हैं। प्रायः कुछ निजी कम्पनियाँ समाचार–पत्रों या समाचार–चैनलों के लिये मतदानोत्तर सर्वेक्षण करतीं हैं।

लोकसभा 2019 आम चुनावों से सम्बन्धित मत–सर्वेक्षण (ओपिनिअन पोल) सर्वेक्षण

सारणी – 01

दिनांक	सर्वेक्षण करने वाली संस्था	एनडीए	यूपीए	अन्य
जनवरी 2018	रिपब्लिक–सी वोटर	335	89	119
जनवरी 2018	इंडिया टुडे	309	102	132
जनवरी 2018	एबीपी न्यूज–सीएसडीएस	301	127	115
मई 2018	एबीपी न्यूज–सीएसडीएस	274	164	105
मार्च 2019	टाईम्सनाउ–वीएमआर	283	135	125
मार्च 2019	न्यूज नेशन	270	134	139
1 फरवरी – 4 अप्रैल 2019	जन की बात	310	122	111
6 अप्रैल 2019	इंड़ियाटीवी–सीएनएक्स	275	126	142
8 अप्रैल 2019	टाइम्स नाउ–वीएमआर	279	149	115
अप्रैल–मई 2019	2019 के आम चुनाव के परिणाम	353	92	97

लोकसभा 2019 आम चुनावों से सम्बन्धित निर्गम मत सर्वेक्षण (एक्जिट पोल) सर्वेक्षण

सारणी – 02

सर्वेक्षण करने वाली संस्था	एनडीए	यूपीए	अन्य
सीएनएन–आईबीएन–इप्सोस	336	124	82
एबीपी–सीएसडीएस	277	135	130
इंडिया टुडे–एक्सिस	352±13	82±13	93±15
न्यूज 24–चाणक्य न्युज18–इप्सोस	350±14	97±11	95±9
सुदर्शन न्यूज	313	109	121

वीडीपी एसोसिएट्स	333	94	115
न्युजएक्स–नेता	242	137	164
रिपब्लिक–जन की बात	305	113	124
रिपब्लिक–सी वोटर	287	127	128

सारणी एक और दो के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कई बार मतदान से पूर्व और पश्चात के चुनाव सर्वेक्षण यर्थाथता से दूर होते हैं, जो इनकी विश्वसनीयता पर संकट उत्पन्न कर देते हैं। एक्जिट पोल के परिणामों पर राजनीतिक दलों के विचार भिन्न है। इसे सभी अपने–अपन चश्मे से देख रहे हैं। कांग्रेस ने एक्जिट पोल के वचनों पर प्रश्न खड़े कर दिए हैं। कांग्रेस के छत्तीसगढ़ प्रभारी पीएल पुनिया का दावा है कि एक्जिट पोल के दावों में विरोधाभास हैं। किसी ने बीजेपी को यूपी में 65 दी हैं तो किसी ने 22... पी.एल. पुनिया ने कहा, एक्जिट पोल के परिणामों में अंतर्विरोध है। उत्तर प्रदेश में बीजेपी को 22 से 65 सीट तक दी गई हैं। इसमें कोई तर्क नहीं है। अभी बिहार में जो विधानसभा चुनाव परिणाम यर्थाथ में देखने को मिले, वह मत सर्वेक्षण और निर्गत मत सर्वेक्षण की सत्यता से दूर है। तृणमूल के वरिष्ठ नेता ने नाम उजागर नहीं करने की शर्त पर कहा, अधिकतर एग्जिट पोल निराधार हैं और भाजपा का समर्थन करते हैं। वे कौन से कारण हैं जो ओपिनियन पोल और एग्जिट पोल पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं–

01. सर्वेक्षण में लिया गया सैंपल साइज यदि सर्वेक्षण कराने वाली कंपनी का सर्वेक्षण हेतु लिया गया सैंपल साइज बहुत कम होता है तो वह सत्यता के निकट नहीं होता है। भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है जहां सर्वेक्षण के लिए व्यापक मात्रा में सैंपलिंग संग्रहित करना आवश्यक है, क्योंकि भारत में लगभग 90 करोड़ मतदाता हैं, इनके विचार जानने के लिए एक बड़े सर्वेक्षण की आवश्यकता होती है। भारत को गाँवों का देश कहा जाता है, जहाँ 600000 से अधिक गाँव हैं। ऐसी स्थिति में देश के विभिन्न मतदाताओं के विचार जानना एक सरल कार्य नहीं अपितु दुष्कर कार्य है।

02. सर्वेक्षण कार्य हेतु बड़ी मात्रा में मानव संसाधन की आवश्यकता होती है जो सर्वेक्षण करने वाली कंपनियों के लिए एक दुष्कर कार्य होता है क्योंकि यह स्थाई प्रकृति का कार्य नहीं है अपितु यह एक मौसमी आवश्यकता वाला कार्य है जहां 1 या 2 माह लिए मानव संसाधनों की आवश्यकता होती है उसके पश्चात यह कार्य संपन्न हो जाता है मानव संसाधन प्रशिक्षित हो और

सर्वेक्षण कार्य करने के लिए कुशल हो या निपुण हो ऐसा होना हर परिस्थिति में संभव नहीं होता यदि कर्मचारी क्षेत्र से परिचित है और वहां की स्थानीय भाषा को जानता है तब वह मतदाताओं का वास्तविक विचार जानने में सफल हो जाता है अन्यथा परिणाम विपरीत हो जाते हैं।

03. वास्तविक सर्वेक्षण करने के लिए बड़ी मात्रा में धन की आवश्यकता होती है और इस कार्य को करने के लिए अत्यधिक समय की आवश्यकता होती है हर कंपनी के लिए धन खर्च करना संभव नहीं होता है।

04. यदि सर्वेक्षण करने वाली कंपनियां संस्था निष्पक्ष नहीं है तब रुझान निष्पक्ष नहीं होंगे और उसके व्यक्तिगत निर्णय से प्रभावित होंगे कई बार सर्वेक्षण धन के लालच में गलत ढंग से आयोजित कर दी जाते हैं या सर्वेक्षण को सनसनी ढंग से प्रस्तुत कर कुछ न्यूज चैनल अपनी टीआरपी बढ़ाते हैं मतदाताओं में भ्रम की स्थिति पैदा होती है और राजनीतिक विवाद उत्पन्न होता है।

05. कई बार मतदाता अपने मत के प्रति सही ज्ञान सर्वेक्षण करने वाले व्यक्ति को नहीं देते हैं। कई मतदाता जो मौन रहकर अपना वोट देकर चले जाते हैं चुनाव सर्वेक्षण करने वाले व्यक्ति को अपनी मत की सूचना नहीं देते हैं ऐसी स्थिति में रुझान की सटीक सूचना प्राप्त करना दुष्कर कार्य हो जाता है। भारत में अधिकतर जनसंख्या गरीब और अशिक्षित है तथा जागरूकता की कमी के कारण वह इस सर्वेक्षण के महत्व को नहीं समझती है।

चुनाव आयोग को अपनी गाइडलाइन में परिवर्तन करना चाहिए और ओपिनियन या एग्जिट पोल को गैरकानूनी घोषित कर देना चाहिए क्योंकि यह चुनाव संहिता का उल्लंघन है। किसी पार्टी को चुनाव से पहले विजयी घोषित कर देना, पता चला कि वास्तविक परिणाम में वह पार्टी सत्ता से बहुत दूर है। ऐसा होने पर मतदाताओं का विश्वास चुनाव आयोग पर नहीं रह जाता है और वह इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन पर संदेह करते हैं। सारी चुनाव प्रक्रिया बेईमानी नजर आती है। चुनाव एक खेल तमाशा या मनोरंजन की तरह हो जाता है। सर्वेक्षण कई बार भ्रम फैलाते हैं और अनैतिक माध्यमों से मतदाताओं को इसी उम्मीदवार के पक्ष में मतदान करने के लिए प्रेरित करते हैं जो अनफेयर पोल प्रैक्टिस के अंतर्गत आती है। मतदाता अपने विवेक से उम्मीदवार को निष्पक्ष रुप से मत नहीं दे पाता है। सोशल मीडिया और मास मीडिया के माध्यम से भ्रम फैलाना सरल हो गया है। राजनीतिक दल या उम्मीदवार भुगतान मीडिया का उपयोग कर इस तकनीक

को और खतरनाक बना रहे हैं। भारत में ओपिनियन पोल और एग्जिट पोल ने लोकतंत्र की आत्मा यानी चुनाव प्रक्रिया और इसकी पवित्रता को नष्ट कर दिया है।

♦♦♦♦♦

10

पूर्वांचल के गांव एवं चुनावी बाजार तंत्र

चंद्रमणि राय

शोधार्थी, गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग अर्थात पूर्वांचल के गांवों में चुनावी बाजार तंत्र की जड़ें अपने विभिन्न रूपों में गहरी जमी हैं। पूर्वांचल की राजनीति माफियाओं, पूंजीपतियों एवं बड़े जमींदारों के हाथों सिंचित होती रही है। प्रस्तुत प्रपत्र में सन् 2000 से 2020 के बीच की पूर्वांचल की चुनावी राजनीति पर पड़ने वाले विभिन्न प्रभावों का विश्लेषण किया गया है।

पूर्वांचल के गांवों में राजनीति– अगर हम पूर्वांचल की राजनीति को समझना चाहते हैं तो हमें सर्वप्रथम गांवों के अंदर झांकना होगा। गांवों में भी छोटे गांवों की राजनीति एवं बड़े गांवों की राजनीति को अलग–अलग करके देखना होगा। क्योंकि बड़े गांव जैसे शेरपुर और गहमर जैसे गांव अपने एकमुश्त वोट से विधानसभा एवं लोकसभा के चुनावों में क्षेत्रीय उम्मीदवारों को सफल एवं असफल में मुख्य भूमिका निभाते हैं। बताते चलें कि शेरपुर वही गांव है जिसकी चर्चा तुलसीराम ने अपनी पुस्तक मुर्दहिया व मणिकर्णिका में किया है एवं गहमर एशिया का सबसे बड़ा गांव है। बड़े गांवों में राजनीति बहुधा धनाढ्यों/जमींदारों के हाथों की कठपुतली होती है। पूर्वांचल की राजनीति में अधिकतर ब्राह्मणों, भूमिहारां एवं राजपूतों का ही वर्चस्व रहा है। लेकिन पिछले 20 वर्षों में 'यादव' जिसको पूर्वांचल में अहिर बोला जाता है, भी चुनावों में अपनी धमक दिखा रहा है। पूर्वांचल की स्थिति यह है कि लगभग हर यादव बहुल गांवों में ग्राम प्रधान 'यादव' ही चुना जाता है। इससे यह भो स्पष्ट है कि हाल के वर्षों में जातीय अस्मिता का प्रश्न चुनावों को वर्तमान से 20 वर्ष पूर्व की तुलना में अधिक प्रभावित कर रहा है। बड़े गांवों को नेताओं एवं दलों की तरफ से संबंधित गांवों के प्रतिनिधियों को चुनावों में व्यय करने हेतु अधिक धन मिलता है इसलिए उन गांवों में गरीब तबकों को मदिरा, साड़ी एवं धन बांट कर उनके वोटों को खरीद लिया जाता है। इसको पूर्वांचल में चुनाव व्यवस्थित करना बोलते हैं। बड़े गांवों में जातियों की जनसंख्या विभिन्न खंडों में विभक्त होती है एवं इनका अनुपात भी लगभग समान होता है इसलिए बहुत सारी जातियां स्वतंत्र रूप से भी मतदान करने का प्रयास करती हैं। अगर छोटे गांवों की बात करें तो छोटे गांवों की राजनीति बहुधा दो पक्षों के बीच संघर्ष की

राजनीति होती है। सामान्यतया यह देखा जाता है कि दोनों पक्ष समाज के समृद्ध तबकों से ही आते हैं। ऐसी अवस्था में पंचायत चुनाव का परिणाम कभी एक पक्ष के प्रत्याशी की तरफ तथा कभी दूसरे पक्ष के प्रत्याशी की तरफ हो जाता है। आरक्षित सीटों पर भी दोनों पक्ष से समर्थित उम्मीदवारों में से कोई जीत जाता है परंतु दोनों पक्ष हमेशा ऐसे व्यक्ति को अपना समर्थन प्रदान करते हैं जो अनपढ़ एवं स्वामीभक्त हो। अगर बात विधानसभा एवं लोकसभा चुनावों की करें तो छोटे गांव बड़े गांवों के नक्शे कदम पर चलने का प्रयास करते हैं। परंतु यहां आबादी सीमित एवं घनी होती है। इसलिए गांव के लोग एक दूसरे से भलीभांति परिचित होते हैं। ऐसे में जमींदार व मध्यवर्ग ना केवल पंचायत चुनावों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करते हैं बल्कि पंचायत चुनावों में अपने पक्ष में पड़े वोटों को विधानसभा एवं लोकसभा के चुनावों में अपने प्रत्यासी के पक्ष में ट्रांसफर करा देते हैं। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि पूर्वांचल में जमीनों का बड़ा भाग भूमिहारों, राजपूतों एवं ब्राह्मणों के पास है। इनकी भूमि पर मजदूरी करने वाला वर्ग अपने भूस्वामियों के प्रति कभी इच्छा से और कभी अनिच्छा से स्वामीभक्ति रखता है। क्योंकि प्रच्छन्न बेरोजगारी के युग में जीवन यापन हेत् इनके पास खेतों में काम करने और दूसरे राज्यों में पलायन के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है। ऐसी अवस्था में जो लोग रोजगार की खोज में दूसरे राज्यों में पलायन कर भी जाते हैं तब भी वह अपने रक्त संबंधियों के दबाव में अपना मतदान बहुधा वहीं करते हैं जहां गांव का समृद्ध वर्ग चाहता है। यद्यपि यहां भी पूंजीपतियों और बाहुबलियों द्वारा व्यापक स्तर पर पैसा, मदिरा एवं साड़ी वितरित का कार्य किया जाता है। हाल के वर्षों में गांवों में यह प्रचलन सामने आ रहा है कि ग्राम प्रधान पद पर प्रत्याशी किसी मंदिर अथवा धार्मिक अनुष्ठान का आयोजन अवश्य करा रहे हैं। इसका कारण पंचायत स्तर पर भी धार्मिक भावनाओं का लाभ उठाना है। इस प्रकार स्पष्ट है कि पूर्वांचल के गांवों में धनबल एवं जाति का चुनावों में विशेष महत्व है।

पूर्वांचल के चुनावों में बाहुबलियों एवं नेताओं की भूमिका–

पूर्वांचल ने मुख्तार अहमद अंसारी, सरजू पांडे, चंद्रशेखर, कल्पनाथ राय, राजनाथ सिंह, मुरली मनोहर जोशी, कलराज मिश्र, योगी आदित्यनाथ, नंदगोपाल नंदी तथा मनोज सिन्हा जैसे राष्ट्रीय स्तर के नेताओं की राजनीति को देखा एवं परखा है। साथ ही साथ पूर्वांचल की भूमि नीरज शेखर, अफजाल अंसारी, ओमप्रकाश सिंह, रामकरन दादा, रंगनाथ मिश्र जैसे क्षेत्रीय स्तर पर प्रभावशाली नेताओं की राजनीति से भी परिचित रही है। इतने वर्चस्वशाली नेताओं के होने के बाद भी पूर्वांचल में कृष्णानंद राय, मुख्तार अंसारी, विजय मिश्र व बृजेश सिंह जैसे माफिया

चुनावों में सफल हुए हैं। इनकी सफलता का प्रमुख कारण इनके ऊपर राजनीतिक वरदहस्त का होना है। कृष्णानंद राय को बीजेपी से संरक्षण प्राप्त हुआ, मुख्तार अंसारी को पहले सपा से एवं हाल ही में बसपा से संरक्षण प्राप्त हो रहा है तथा बृजेश सिंह व विजय मिश्रा जातीय समीकरण का लाभ उठा रहे हैं। साथ ही साथ इन माफियाओं की छवि जनता के बीच रॉबिन हुड की भी बनी हुई है। सन 2000 के शुरुआती वर्षों में कृष्णानंद राय, मुख्तार अंसारी व बृजेश सिंह के बीच त्रिकोणीय हिंसा से पूर्वांचल दो–चार होता रहा। अंततः 2005 में कृष्णानंद राय को हत्या के बाद मुख्तार अंसारी गैंग द्वारा एक विशेष जाति एवं बीजेपी से संबंधित नेताओं को चिन्हित कर हत्याएं करवाई गईं। परंतु राजनीतिक संरक्षण प्राप्त होने के कारण सबूतों से छेड़छाड़, गवाहों की हत्या एवं धन के प्रभाव से यह माफिया अभी तक न्यायपालिका से बचते आए हैं। इन बाहुबलियों द्वारा चुनावों में न केवल मदिरा एवं धन वितरित जाता है बल्कि व्यापक स्तर पर हिंसा एवं भय का प्रयोग कर बूथ नियंत्रित किया जाता रहा है। मुख्तार अंसारी जैसे बाहुबली पैसा, धनबल, हिंसा एवं भय के साथ–साथ मुस्लिम वोटों के ध्रुवीकरण की राजनीति भी करते हैं।

पूर्वांचल में किसान, मजदूर व चुनाव–

पूर्वांचल के चुनावों को बहुधा धनबल एवं हिंसा ने प्रभावित किया है। बीच–बीच में कल्पनाथ राय एवं मनोज सिन्हा जैसे नेताओं ने विकास की एक छोटी सी किरण दिखाई है। परंतु हाल के वर्षों में पूर्वांचल में अस्मिता एवं पहचान की राजनीति की झलक भी दिखाई पड़ रही है। यहां मतदाता अपनी जातीय अस्मिता को न केवल राजनीतिक पहचान दे रहा है बल्कि अपने पारंपरिक व्यवसाय को भी अपनी अस्मिता के साथ जोड़ कर देख रहा है। इसके समानांतर कृषक समुदाय जातीय बंधन से ऊपर उठकर स्वयं को किसान के रूप में सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे हैं। इसकी जड़ें हमें किसान नेता स्वामी सहजानंद के आंदोलनों में दृष्टिगत होती हैं। वर्तमान समय में पूर्वांचल में किसी बड़े किसान नेता के उभार की संभावनाएं प्रबल हैं। यहां का किसान आढ़तियों, बनियो, दलालों एवं बिचौलियों से निरंतर परेशान रहा है। उनके लाभ का भाग अधिकतर इन्हीं बिचौलियों के खाते में जाता रहा है। जिसका परिणाम यह है कि तत्कालीन समय में दिल्ली में चल रहे किसान आंदोलन से पूर्वांचल का किसान स्वयं को नहीं जोड़ पा रहा है। 2019 के लाकसभा चुनाव में अपने आपको किसान नेता सिद्ध करने का प्रयास कर रहे वीरेंद्र सिंह मस्त की बालियां लोकसभा से जीत किसानों के अस्मिता की चेतना से भी संबंधित है।

पूर्वांचल में अस्मिता की राजनीति के उभार के कारण संभव है कि चुनावों में धनबल एवं हिंसा की राजनीति का प्रभाव कम हो।

स्पष्टतः यह कहा जा सकता है कि पूर्वांचल की गरीबी ने चुनावों में धनबल एवं जाति की राजनीति को पुष्ट होने में मुख्य भूमिका निभाई। पूर्वांचल का मतदाता भय, हिंसा और अन्य प्रलोभनों के बाद भी समय–समय पर अपनी निजी समझदारी का परिचय देता रहा है जिसका परिणाम है कि पूर्वांचल का मतदाता अब धन–बल एवं हिंसा से युक्त राजनीति के स्थान पर अस्मिता, गरिमा एवं सम्मान की राजनीति करना चाहता है।

♦♦♦♦♦

डी.सी.आर.सी.

विकासशील राज्य शोध केन्द्र

अकादमिक अनुसंधान केन्द्र भवन

गुरू तेग बहादुर मार्ग

दिल्ली विश्वविद्यालय

दिल्ली-110007